श्री सोलहकारण विधान

व्रत महिमा

अंतरमन से श्रद्धा कर, व्रत करना सुखकार।
सोलह कारण भावना, खोले मुक्ति का द्वार।।

चौपाई

श्री जिनवर जी को शीश झुकाऊँ, सोलह कारण भाव को भाऊँ।
प्रभु ने ही उपदेश सुनाया, व्रत की महिमा को बतलाया।।
नर भव पाया सुकुल जैन कुल, सत्संगति और भाव है अतुल।
सार्थक होगा तब इसे पाना, जब जिनवर संदेश को माना।
तीर्थंकर बनने की राह है, जिनको मुक्ति सुख की चाह।।
दुख अनंत से बचना चाहे, सुख अनंत को पाना चाहें।
श्रद्धा से करना व्रत धारण, व्रत का नाम है सोलहकारण।
यह व्रत करते सभी तीर्थंकर, तब ही बनते है वो तीर्थंकर।।
पुण्य प्रकृति व्रत से मिलती है, जिनवच की कलियाँ खिलती है।
पाप हारी और पुण्य प्रकाशी, व्रत करते है भव वन वासी।।
इससे भव का होवे नाश, होता इससे पुण्य प्रकाश।
तीर्थंकर की दिव्य देशना, हम भी सुनते वही देशना।।
स्वयं तिरे सबको तिरवावें, भव्य जीव को पार लगावें।
अंत में जाते मुक्तिपुर में, भक्त भक्ति गाते है सुर में।।

दोहा

भाव भक्ति को हृदय धर, करना शुद्ध विचार।
मुक्ति का रास्ता यही, जीवन का यही सार।।

सोलहकारण समुच्चय पूजा

शंभू छंद

सोलहकारण भावना भाने से, तीर्थंकर पद मिलता है।
सोलहकारण व्रत की साधना, मुक्ति का घर मिलता है।।
सोलहकारण भावना का हम, आव्हानन करने आये है।
भक्ति श्रद्धा हृदय में मेरे, हृदय बिठाने आये है।।

दोहा

भाव से भाऊँ भावना, भाव शुद्ध हो जायें।
भव बंधन से छूटकर, भव वारिधि तिर जायें।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणानि! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणानि! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणानि! अत्र मम सन्निहितौ भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

शंभू छंद (भला किसी का ......)

तन को शुद्ध बनाने हेतु, जल तन मल को धोता है।
आत्म मैल न धोया अब तक, बीज पाप के बोता है।।
दर्श से तेरे जाग्रति आई, अब बनना है तुम जैसा।
सोलहकारण जल से पूजूँ, संशय होवें अब कैसा।।1।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन जैसी शीतल आतम, क्रोध ताप में तपती है।
आत्मज्ञान बिन सब कुछ करते, इससे कष्ट उठाती है।।
सम्यक्‌दर्शन पाने हेतु, पूजा करते चन्दन से।
सोलहकारण सच्ची श्रद्धा, कर्म कटेंगे वन्दन से।।2।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्जवल आतम अखंडमयी है, कीना खंडित कर्मों ने।
निज स्वरूप को जान न पाया, जानूँ अब तुम चरणों में।।
कृपा कुंज की कृपा जो होवे, मिट जावेगे सारे दोष।
सोलहकारण पूजा करके, आवेगा आतम संतोष।।3।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के सुख बड़े मीठे लगते, बाद में दुख ही देते है।
उलझा रहूँ मैं इन्ही में भगवन, शाश्वत सुख तज देते है।।
शाश्वत सुख की याद जो आई, बनना है तुम ही जैसा।
सोलहकारण पुष्प से पूजूँ, नाथ करो अपने जैसा।।4।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भूख लगे भोजन करते है, पेट न अब तब भर पाया।
चारों गतियों में खाया पर, सत्य समझ में ना आया।।
ज्ञान अमृत है आत्म का भोजन, अब इसको ही करना है।
सोलहकारण पूजा करके, आतम तृप्त कराना है।।5।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

मोह अंधेरा क्यों करता है, करना है इस पर चिन्तन।
मोह कर्म का मोह राजा है क्यों, करना है मन में मंथन।।
ज्ञानदीप ही मोह अंधेरा, दूर करन में सक्षम है।
सोलहकारण दीप से पूजू, भाव से जिन का वंदन है।।6।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म से बोझिल हुई आत्मा, नीचे कर्म इशारे पर।
राग द्वेष का झूला झूले, नही गई आतम पे नजर।।
कर्म रहित है भगवन मेरे, मुझे भी कर्म रहित करना।
सोलहकारण धूप से पूजूं, आया हूँ प्रभु की शरणा।।7।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

रात ओ दिन हम कर्म हैं करते, फल पर ध्यान ना जाता है।
फल मिलता तब दुखमय होकर, शरण में तेरी आता है।।
मुक्ति फल को पाने वाले, राह मुक्ति की बतलाओ।
सोलहकारण फल से पूजूँ, ध्यान साधना सिखलाओ।।8।।
ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वीतराग छवि अतुल तेज है, दीप्ति कांति चहूँ ओर झरे।
दिव्य आभा है दिव्य रूप है, भक्तों का भी चित्त हरे।।
ऐसे प्रभु ने सोलहकारण, भाव आत्म में भाये थे।
मैं भी सोलहकारण पूजूँ, भव्य को पाथ दिखाये थे।।9।।
ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

भव्य जीव की करते है, उत्तम व्रत का ध्यान।
तीर्थंकर पदवी मिले, बारम्बार प्रणाम।।

चौपाई

दर्श विशुद्धि प्रथम भावना, त्याग कराये जगत कामना।
विनय शील संग अतिचार तज, सदा ज्ञानअभ्यास को भी भज।।1।।
धर संवेग शक्ति से त्यागे, शक्ति से तप धार विरोग।
साधु समाधि वैयावृत्ति, आचार्य बहुश्रुत की भी भक्ति।।2।।
प्रवचन भक्ति आवश्यक करना, मार्ग प्रभावना धर्म को वरना।
प्रवचन वत्सल ज्ञान सिखावे, बन तीर्थंकर मोक्ष को जावें।।3।।
षोड्स कारण व्रत हिय धारो, तीन प्रकार से इसे सँभारों।
उत्तम मध्य जघन्य से कीजे, शक्ति के अनुसार ही कीजे।।4।।
एक मास उपवास है करना, उत्तम विधि तो यही है वरना।
एकान्तर में बेला तेला, मध्यम विधि कटे कर्म का जाला।।5।।
एकाशन करे पर्व पे अनशन, जघन्य विधि का यही है भासन।
रस को त्याग एकाशन कीजे, शुरू अंत में अनशन कीजे।।6।।

सोलह वर्षों तक है करना, जाप पूजा औ भक्ति करना।
भोजन के संग कषाय त्यागों, अपनी अन्तर आत्म में जागों।।7।।
सोलवें वर्ष उद्यापन करना, वरना व्रत को दूना करना।
व्रत की महिमा जानना चाहो, जिनवर जी के दर्श को पाओ।।8।।
जिन ने किया भव सिन्धु तर गये, तीर्थंकर बन मुक्ति में गये।
शास्त्रों में है यही बताया, जिनवर जी को शीश झुकाया।।9।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यः जयमाला पूर्ण अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

आत्म धर्म की प्राप्ति को, यह व्रत करें महान।
आत्म बोध होवे मुझे, बारम्बार प्रणाम।।

इत्याशीर्वाद परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।

जाप्य मंत्रः— ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि आदि षोडशकारणेभ्यो नमः

दर्शनविशुद्धि भावना पूजा
तर्ज– चौबीसी पूजा (जल फल आठो.....)

दर्शन विशुद्धि का भाव, मन में आया है।
इसलिये किया व्रत देव, मन में भाया है।।
आतम में विशुद्धि होय, पूजा को आये है।
आव्हानन करते देव, भावों को भाये।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हाननम्।
ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावना! अत्र मम सन्निहितौ भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

हितमित प्रिय वाणी बोले, मन को सरल किया।
धोया आतम का मैल, हरता गरल हिया।।
दर्शन विशुद्धि बिन मोक्ष, मिल ना पायेगा।
श्रद्धा भक्ति से पूजूँ सुख खुद आयेगा।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

तप की गर्मी से आत्म, शीतल होता है।
ना जाना अब तक राज, दुखमय होता है।।
दर्शन विशुद्धि बिन मोक्ष, मिल ना पायेगा।
श्रद्धा भक्ति से पूजूँ, सुख खुद आयेगा।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

है अजर अमर निधि आत्म, तत्व को भूला हूँ।
नश्वर वस्तु में प्रयास, भव दुख पाया हूँ।।
दर्शन विशुद्धि बिन मोक्ष, मिल ना पायेगा।
श्रद्धा भक्ति से पूजूँ, सुख खुद आयेगा।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गतियों में भोग, भोग न तृप्त हुआ।
इनसे बढ़ता है राग, तुमसे जान लिया।।
दर्शन विशुद्धि बिन मोक्ष, मिल ना पायेगा।
श्रद्धा भक्ति से पूजूँ, सुख खुद आयेगा।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम का भोजन ज्ञान, अब यह करना है।
व्रत संयम तप उपवास, भूख को हरना है।।
दर्शन विशुद्धि बिन मोक्ष, मिल ना पायेगा।
श्रद्धा भक्ति से पूजूँ, सुख खुद आयेगा।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

बाहर में करें प्रकाश, निज में अंधेरा है।
आलोकित होवे आत्म, ज्ञान सवेरा है।।
दर्शन विशुद्धि बिन मोक्ष, मिल ना पायेगा।
श्रद्धा भक्ति से पूजूँ, सुख खुद आयेगा।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों के विजेता आप, कर्म को भगा दिया।
बनूँ कर्म विजयी भगवान, दर्श से जान लिया।।
दर्शन विशुद्धि बिन मोक्ष, मिल ना पायेगा।
श्रद्धा भक्ति से पूजूँ, सुख खुद आयेगा।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हे कल्पवृक्ष के धाम, चरणों आया हूँ।
पूजा मुक्ति फल हेतु, शीश झुकाया हूँ।।
दर्शन विशुद्धि बिन मोक्ष, मिल ना पायेगा।
श्रद्धा भक्ति से पूजूँ, सुख खुद आयेगा।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अष्टद्रव्य का थाल, अष्टम भू पाऊँ।
आठों कर्मों को नाश,सिद्धालय पाऊँ।।
दर्शन विशुद्धि बिन मोक्ष, मिल ना पायेगा।
श्रद्धा भक्ति से पूजूँ, सुख खुद आयेगा।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

सर्व सिद्धि दातार हो, उपमा कही ना जायें।
पुष्पांजलि कर पूजतें, शत्–शत् शीश झुकायें।।

इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलि क्षिपेत।

प्रत्येक अर्घ्यावली

चौपाई तर्ज (ऐ मेरे वतन के लोगों......)

अटल अचल श्रद्धान किया है, निशंकित गुण पाय लिया है।
दर्श विशुद्धि तभी है होती, तभी मिले निज आत्म के मोती।।1।।
ॐ ह्रीं निःशंकितगुणसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्व. स्वाहा।
धर्म करें, इच्छा न रखते, मात्र आत्म की भावना रखते।
निकांक्षित गुण धारण करना, कर्म शत्रु निरवारण करना।।2।।
ॐ ह्रीं निःकाक्षितगुणसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्व. स्वाहा।
वस्तु देख ग्लानि ना करना, पुद्गल के ही रूप समझना।
निर्विचिकित्सा गुण बतलाया, दर्श विशुद्धि शुद्ध बनाया।।3।।
ॐ ह्रीं निर्विचिकित्सादृष्टिगुणसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्व. स्वाहा।
देव धर्म गुरू मूढ़ता नाही, करें परीक्षा जाते माहीं।
अमूढ़ दृष्टि, बन गुण गाना, आत्म विशुद्धि पाने ध्याना।।4।।
ॐ ह्रीं अमूढ़दृष्टिगुणसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
पर के दोष देख चुप रहना, जग में नाहि किसी से कहना।
उपगूहन से शिक्षा पाओ, दर्श विशुद्धि आतम ध्याओं।।5।।
ॐ ह्रीं उपगूहनगुणसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
व्रत संयम से कोई डिगता, दे उपदेश उसे दृढ़ करता।
धर्म में स्थित स्थितिकरण है, दर्श विशुद्धि का ही वरण है।।6।।
ॐ ह्रीं स्थितिकरणसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
प्रीति धर्मात्मा से करना, उसमें स्वार्थ जरा ना रखना।
वत्सल अंग सदा हितकारी, दर्श विशुद्धि महिमा न्यारी।।7।।
ॐ ह्रीं वात्सल्यगुणसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
श्रद्धा हर हृदय में जगायें, सब ही जिनवर के गुण गायें।
धर्म प्रभावना भाव से करना, धर्मात्मा के कष्ट को हरना।।8।।

ऊँ ह्रीं प्रभावनाअंगसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
अष्टगुणों का पूरण पालन, सम्यग्दर्शन का हो लालन।
दर्श विशुद्धि तभी होवेगी, आत्म शुद्धि तब ही आयेगी।।9।।
ऊँ ह्रीं अष्टगुणसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

आठ मद रहित दर्शन विशुद्धि

मातृ पक्ष में मामा राजा, अभी बजाऊँ तेरा बाजा।
जातिमद से रहित है जिनवर, दर्श विशुद्धि पाई मनहर।।9।।
ऊँ ह्रीं जातिमद रहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
बड़े पदधारी पिता औ दादा, मेरे सामने बोल न ज्यादा।
कुल मद रहित हो दर्श विशुद्धि, वह करती आतम की शुद्धि।।10।।
ऊँ ह्रीं कुलमदरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
ज्ञानी न मुझसा कहीं है दूजा, मेरे ज्ञान की होती पूजा।
ज्ञान मान भी तुमने त्यागा, दर्श विशुद्धि आतम जागा।।11।।
ऊँ ह्रीं ज्ञानमदरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
सब जन मेरी बात मानते, पूजा स्तुतियाँ भी करते।
पूजा का अभिमान है छोड़ा, दर्श विशुद्धि आतम जोड़ा।।12।।
ऊँ ह्रीं पूजामदरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
रूपवान है मेरी काया, मुझसा दूजा जग में ना पाया।
रूप मान को त्याग दिया है, दर्श विशुद्धि धार लिया है।।13।।
ऊँ ह्रीं रूपमदरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
मैं तो हूँ घन घोर तपस्वी, मैं ही जग में हुआ यशस्वी।
तप मद त्यागा बने तीर्थंकर, दर्श विशुद्धि आत्म हितंकर।।14।।
ऊँ ह्रीं तपमदरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
हूँ बलवान, मैं तुझे पछाड़ूँ, आत्म धर्म को नाहिं विचारूँ।
बल मद को भी ना ही करते, दर्श विशुद्धि भाव को धरते।।15।।
ऊँ ह्रीं बलमदरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
मैं ऋद्धि सिद्धि का धारी, सर्व शक्तियों का हूँ धारी।
ऋद्धि मद तज बने दिगम्बर, छोड़ दिये आभूषण अंबर।।16।।
ऊँ ह्रीं ऋद्धिमदरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
अष्ट मान दुर्गति ले जावें, धर्म करें पर फल न पावें।
इसीलिये तो तुमने छोड़ा, निज आतम से नाता जोड़ा।।17।।

ॐ ह्रीं अष्टमदरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
नर्क स्वर्ग पर भव में शंका, थी या नहीं थी स्वर्ण की लंका।
शंका तज श्रद्धान किया है, वीर वाणी को मान लिया है।।18।।
ॐ ह्रीं शंकादोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
आकांक्षा रख धर्म को करते, आत्म भाव में नाहीं सँवरते।
आकांक्षा को त्याग दिया है, बिन आकांक्षा धर्म किया है।।19।।
ॐ ह्रीं कांक्षादोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
सुन्दर वस्तु से करते प्रीति, बाकी में करते अप्रीति।
ग्लानि त्याग मन समता धारी, दर्श विशुद्धि की महिमा न्यारी।।20।।
ॐ ह्रीं विचिकित्सादोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
जिनको मैनें भगवन माना, देख परख से रहा अंजाना।
करके परीक्षा सिर को झुकाओं, तब ही दर्श विशुद्धि पाओ।।21।।
ॐ ह्रीं मूढ़दृष्टिदोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
दोष दूसरों के कहते है, निन्दा में ही रस लेते है।
दोष तजूँ गुण आतम गाऊँ, प्रभु चरणों में शीश झुकाऊँ।।22।।
ॐ ह्रीं परदोषभाषणदोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
धर्म जो करता उसे डिगाये, धर्म मार्ग उसे ना बताये।
अस्थितिकरण को दूर किया है, दर्श विशुद्धि धार लिया है।।23।।
ॐ ह्रीं अस्थितिकरणदोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
धर्मात्मा से छोड़ी प्रीति, धर्म से करता वही अप्रीति।
द्वेष दोष तज वात्सल्य धारा, मिले धर्म से आप सहारा।।24।।
ॐ ह्रीं अवात्सल्य दोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
दोषी अप्रभावना करता है, व्यर्थ में पाप झोली भरता है।
दोष त्याग के प्रभावना कीनी, दर्श विशुद्धि निज की लीनी।।25।।
ॐ ह्रीं अप्रभावना दोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
भव–भव दोष किये हैं भारी, दोष दूर करने की बारी।
इसीलिये पूजा को आये, व्रत विधान भक्ति भी गाये।।26।।
ॐ ह्रीं शंकादि अष्टदोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
वीतराग जिनके न लक्षण, चाहे कितने होय विलक्षण।
उनकी प्रशंसा नहीं करूँगा, दर्श विशुद्धि भाव धरूँगा।।27।।
ॐ ह्रीं कुदेवप्रशंसाआयतन दोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

भक्त कुदेव के सामने आये, नहीं प्रशंसा उनकी गाये।
सम्यग्दर्श में दोष है लगता, सम्यग्दर्श को शीश झुकाता।।28।।

ॐ ह्रीं कुदेव भक्त प्रशंसा दोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

हिंसा का संदेश जो देवे, ऐसा धर्म कभी न सेवे।
नहीं प्रशंसा उसकी गाऊँ, जिनशासन को शीश झुकाऊँ।।29।।

ॐ ह्रीं कुधर्म प्रशंसा दोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

रागी द्वेषी देव के सेवी, भक्त अनंत हुये है हावी।
पर न उनकी प्रशंसा गाऊँ, सच्चे देव को शीश झुकाऊँ।।30।।

ॐ ह्रीं कुधर्मसेव प्रशंसा दोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

बड़ा प्रभावक भाषण देते, कई शिष्यों के गुरू कहाते।
वीतराग गुण यदि न खोवे, नहीं प्रशंसा उनकी करते।।31।।

ॐ ह्रीं कुगुरू प्रशंसा दोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

शिष्य कुगुरू का है होशियार, हर कारज में है तैयार।
नहीं प्रशंसा कर सकते है, वरना दोषों को भरते है।।32।।

ॐ ह्रीं कुगुरूभक्तप्रशंसा दोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

बिना परीक्षा प्रभु न मानो, बिना जाने न शीश झुकाओं।
देव मूढ़ता दोष लगाया, प्रायश्चित का भाव है आया।।33।।

ॐ ह्रीं देवमूढ़तादोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म अहिंसा जहाँ न होवे, सच्चा धर्म वहाँ न होवें।
स्याद्वाद हैं जिनके लक्षण, वह ही सच्चा धर्म विलक्षण।।34।।

ॐ ह्रीं धर्ममूढ़तादोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

वीतरागी गुरू होंय दिगम्बर, राग द्वेष तज तजे है अम्बर।
गुरू मूढ़ता कभी न करना, धर्म विशुद्धि भाव को धरना।।35।।

ॐ ह्रीं गुरूमूढ़तादोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

पच्चीस दोषों से रहित, सम्यग्दर्शन होय।
जाँच परख का देख लो, कम ना ज्यादा होय।।36।।

ऊँ ह्रीं अष्टमद, अष्ट शंकादि दोष, षट् अनायतन, त्रयमूढ़ता दोष रहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

चाल छंद (तर्ज– ऐ मेरे वतन के......)

सप्त व्यसन रहित

है व्यसन तो खोटी आदत, ना छोड़े लगी बुरी लत।
व्यसनी को नरक ले जाये, अब छोड़ तेरे गुण गाये।।37।।

ऊँ ह्रीं सप्त व्यसनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जुआँ मनोरंजन का साधन, धन गँवा के बन गया निर्धन।
धन धरम तो दोनों जावें, जिनदेव जी त्याग करावें।।38।।

ऊँ ह्रीं जुआँ व्यसनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दूजे को मार के खावें, हिंसा का पाप कमावें।
धर्मात्मा नहीं हो सकता, व्यसनी तो दुख को पाता।।39।।

ऊँ ह्रीं आमिषव्यसनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जो पी शराब मद करता, वो होश स्वयं का गँवाता।
तन धन परिवार बिगाड़े, धर्मात्मा इसको छोड़े।।40।।

ऊँ ह्रीं मदिराव्यसनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जो सारे नगर की नारी, सेवन करता अज्ञानी।
यह व्यसन महा दुखदायी, करो त्याग होओ सुखदायी।।41।।

ऊँ ह्रीं गणिका व्यसनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जो मारे लगा निशाना, जीवों को दुख दें हाना।
कोई भी जीव न मारो, अपने समान ही जानों।।42।।

ऊँ ह्रीं आखेट व्यसनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

पर वस्तु की चोरी न कीजे, संतोष आत्म में लीजे।
जो है उसमें सुख माना, तब दर्श विशुद्धि पाना।।43।।

ऊँ ह्रीं चोरी व्यसनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दूजे की नारी से प्रीति, यह बात बहुत ही अनीति।
वह धर्म औ शांति गँवायें, जग उसकी हँसी बनायें।।44।।
ऊँ ह्रीं परदारा व्यसनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
व्यसनों से दुर्गति होवें, औ पाप बीज को बोवें।
शुभ धर्म औ धैर्य को धारो, सारे दुख कष्ट निवारों।।45।।
ऊँ ह्रीं सर्व व्यसनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
संक्रांति श्रद्धा में दान, इसको भी धर्म है मान।
नहि सच्चा धर्म है जाना, इसको तज श्रद्धा लाना।।46।।
ऊँ ह्रीं संक्रांतिव्यसनरहितदर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
अग्नि को माना देवा, और उसकी करते सेवा।
सम्यग्दर्शन में दोष, तज धर मन में संतोष।।47।।
ऊँ ह्रीं अग्नि सेव रहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
ये ग्रह नक्षत्र है ज्योतिष, पूजा कर करते पोषित।
बस वीतरागता पूजों, बाकी में समता लाओं।।48।।
ऊँ ह्रीं ग्रहनक्षत्रसेवारहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
गोमूत्र को शुद्ध बताकर, पीते है श्रद्धा लाकर।
तत्वों को जानों पढ़कर, सच्ची श्रद्धा को उरधर।।49।।
ऊँ ह्रीं गोमूत्रादिसेवारहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
एकेन्द्रिय रत्न का पत्थर, पत्थर को माना हरिहर।
आतम पर श्रद्धा लाओ, औ सिद्ध प्रभु को ध्याओ।।50।।
ऊँ ह्रीं रत्नपाषाणादिसेवारहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
भूमि की पूजा करते, और इसमें धर्म भी धरते।
तत्वों को समझो भाई, सच्ची श्रद्धा सुखदाई।।51।।
ऊँ ह्रीं भूमिसेवारहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
पर्वत को भगवन माना, और इसकी पूज रचाना।
मिथ्यात्व तजो सुख होगा, औ निज आतम जागेगा।।52।।
ऊँ ह्रीं पर्वतपनरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
नदी में स्नान धरम है, पापों का होय शमन है।
आतम के मैल को धोना, तो सच्ची श्रद्धा पाना।।53।।
ऊँ ह्रीं नदीस्नानश्रद्धारहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि में जल हो मुक्ति, अज्ञानी की है युक्ति।
कर्मों का नाश करोगें, तो मुक्ति सुख पाओगे।।54।।
ऊँ ह्रीं अग्निपातरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
ज्ञानी ध्यानी वैरागी, जिनकी आतम है जागी।
उन सच्चे गुरू को ध्याओं, बाकी में मन ला लाओ।।55।।
ऊँ ह्रीं कुगुरूसेवारहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
गज बैल औ हाथी घोड़ा, गाड़ी मोटर की पूजा।
यह तो मिथ्यात्व बताया, जो भव–भव में भटकाया।।56।।
ऊँ ह्रीं वाहनसेवारहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
शस्त्रों से जीव है मरते, अज्ञानी पूजा करते।
हो वीतरागी की पूजा, नहीं श्रेष्ठ है जग में दूजा।।57।।
ऊँ ह्रीं शस्त्रसेवारहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
जो देव दूजे को मारें, जन पूजा उन्हें सँवारें।
हिंसा नहि धर्म बताया, शुभ धर्म अहिंसा गाया।।58।।
ऊँ ह्रीं हिंसादेवसेवारहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
रात्रि भोजन नहि धर्म, तजना है धर्म का मर्म।
रक्षा जीवों की करना, औ पाप कर्म को हरना।।59।।
ऊँ ह्रीं निशाआहाररहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
बिन छना नीर न पीना, उन जीव को भी है जीना।
जीवों पर कीजे करूणा, दुर्गति ही होगी वरना।।60।।
ऊँ ह्रीं जलगालनविधिसहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
फल नहीं कठूम्बर खाओ, है यह अभक्ष्य समझाओ।
घने जीव भरे इस अन्दर, त्यागो जन धर्म धुरंधर।।61।।
ऊँ ह्रीं कठूम्बरभक्षणरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
यह भी अभक्ष्य बतलाया, है जीव उदुम्बर पाया।
जिव्हा वश करके त्यागो, निज धर्म मार्ग में लागो।।62।।
ऊँ ह्रीं उदम्बरआहाररहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
जिनके दिल दया है रहती, वे भाव शुद्धियां धरती।
ऊमर को नही है खाना, सम्यग्दर्शन को पाना।।63।।
ऊँ ह्रीं ऊमरफलभक्षणरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

वट वृक्ष के फल नहीं खाना, है नंत जीव का खजाना।
मत व्यर्थ में पाप कमाओ, तज पुण्य भागी बन जाओं।।64।।

ऊँ ह्रीं वटफल भक्षणरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

वीरा ने ये बतलाया, पीपल फल त्याग कराया।
वाणी पर श्रद्धा रखना, और त्याग शीघ्र ही करना।।65।।

ऊँ ह्रीं पीपलफलभक्षणरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

मधुमक्खी लार निकाले, है नंत जीव के जाले।
ऐसा मधु कभी न खाना, वीरा पर श्रद्धा करना।।66।।

ऊँ ह्रीं मधुभक्षणरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

शंभू छंद

सच्चे सुख का है मार्ग यही, जो वीरा ने बतलाया है।
मिथ्यात्व औ हिंसा भाव तजो, मिले जिनवाणी की छाया है।।
दर्शन विशुद्धि में निर्मलता, तब इन भावों से आयेगी।
तीर्थंकर तीरथ बन तिरकर, मुक्ति की डगर ही भायेगी।।

ऊँ ह्रीं सकलदोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला (शेर चाल)

शुभ दर्श विशुद्धि की, भावना को पाना है।
दर्शन विशुद्धि धारी की, शरण में आना है।।
उपदेश उनका है महान, सत् राह दिखाता।
हर कर अंधेरा मोह का, सत् पथ पे चलाता।।

दर्शन विशुद्धि महिमावान, विजय कराये।
त्रिलोक का स्वामी बना, भगवान बनाये।।
चक्री बना छह खंड का, ये राज्य दिलाये।
स्वर्गों में भी अहमिन्द्र, की पदवी पे बिठाये।।

कल्याण पंच को मना, तीर्थंकर बनाये।
चार घाति कर्म नशा, मोक्ष दिलाये।।
दर्श विशुद्धि की महिमा, सर्वव्यापी है।
भावों से जिसने भा लिया, वो सर्वत्यागी है।।

प्रथम नरक छोड़ के, आगे नहीं जाता।
ज्योतिष भवन व्यंतरों, में भी नहीं जाता।।
अंधा लूला लंगड़ा और, गरीब न होता।
विकलत्रय और वो, पशु न बनता।।

थावर न बने और वो, स्त्री नहीं बनता।
नपुंसक भी न बनता, और दरिद्री ना बनता।।
दर्शन विशुद्धि भावना तो, पुण्यवान है।
जो एक बार भाये, वो बनता महान है।।

सर्व तीर्थंकर ने भायी, दर्श विशुद्धि।
आतम से दूर हो गई, थी सर्व अशुद्धि।।
इस भावना को भाने प्रभु, हम भी आये है।
आतम विशुद्धि पाने के, ये भाव भाये है।।

दोहा

दरश विशुद्धि भावना, देती सब वरदान।
सोलहकारण व्रत करूँ, बारम्बार प्रणाम।।
ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनाय पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

मोह महातम दूर कर, शुद्ध भाव से ध्याय।
सुख समृद्धि सब बढ़े चरणों शीश झुकाये।।

।।परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं दर्शन विशुद्धि भावनायै नमः

विनय संपन्न भावना पूजा

शंभू छंद (तर्ज–भला किसी का कर......)

नत मस्तक हो कर जोड़ प्रभो, हम विनय भाव से भरे हुये।
स्तवन वन्दन करने आये, बड़ी विनय भाव से चरण हुये।।
संपन्न विनय से होना है, इससे मुक्ति धन मिलता है।
संपन्न विनय की पूजा से, मेरा अंतर्मन खिलता है।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

भुजंग प्रयात (तर्ज – नरेन्द्र फणीन्द्रं ......)

अभिमान क्रोध को, शीघ्र बुलाये।
क्रोध कलेश से, मुझको मिलाये।।
धर के विनय भाव, इसको भगाऊँ।
संपन्न विनय की, मैं पूजा रचाऊँ।।1।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चिन्ता की अग्नि ने, मन को जलाया।
सहे ताप आतम, बड़ा दुःख पाया।।
सहज शान्त आतम का, ध्यान लगाऊँ।
प्रचंड घमंड को, दिल से भगाऊँ।।2।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शाश्वत अखंडित है, चेतन हमारा।
पुदग्ल के टुकड़ों ने, कीना बंटवारा।।
अविनाशी ध्रुव आत्म, ध्यान लगाऊँ।
बनूँ आप जैसा, निजातम को पाऊँ।।3।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नताभावनाय अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं भोगो का भंवरा, युं जग सुख में डूबा।
ये देते बहुत दुख, बनाया अजूबा।।
प्रभु को लखा जब से, आतम है जागी।
तजूँ मैं भी भोगो को, बन के वैरागी।।4।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भूख है रोग, औ भोजन दवाई।
यही बात मुझको, समझ में न आई।।
लिया स्वाद भोजन का, प्रेमी बना हूँ।
तजूँ स्वाद जग के, चरण में खड़ा हूँ।।5।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है बाहर उजाला, मैं फिर भी भटकता।
नहीं ज्ञान दीप, मैं जग में अटकता।।
जिनागम को पढ़कर, मैं सत्पथ चलूँगा।
प्रभो जो कहेंगे, वही मैं करूँगा।।6।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

गठरी करम की, ये खाली न होती।
नित नये कर्मों की, रहती चुनौती।।
विनय में है शक्ति, करम को हरेगा।
विनय भाव धर कर के, मुक्ति वरेगा।।7।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जगत स्वार्थ में है, जगत काम करते।
पर स्व अर्थ हेतु, नही कुछ भी करते।।
करूँ धर्म जितना, विनय फल मैं चाहूँ।
विनय से करूँ धर्म, विनय फल चढ़ाऊँ।।8।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनाय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतन ने तन को, सदा अपना माना।
तन के लिये छोड़ा, आतम तराना।।
तन छूटने पे, ये ज्ञान है आया।
धरूँ आत्म संयम, पा जिनवर की छाया।।9।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नताभावनाय अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

विनय भावना को धारकर, हृदय को शुद्ध बनाये।
विनय से मुक्ति पथ मिले, पुष्पांजलि कराये।।

।।परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

शंभू छंद (तर्ज–भला किसी का कर..)

विनय से शास्त्रों को पढ़कर के, शीश को नित्य झुकाना है।
पन्ना ना मोड़ों लौंग न छोड़ों, गीले हाथ न लगाना है।।
सोने से लिखाओ, या छपवाओं, ज्ञान दान भी करना है।
ज्ञान विनय हो ज्ञानी विनय हो, ज्ञाना वरणी को हरना है।।1।।

ऊँ ह्रीं ज्ञान विनय भावनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दर्शन धारी जीव की, विनय भाव से करन है।
सम्यग्दर्शन प्राप्ति हेतु, भाव ह्रदय में धरना है।।
सम्यग्दर्शन मुक्ति की सीढ़ी, चढ़ मुक्ति में जाना है।
पंच परम परमेष्ठी की भक्ति,चरणों अर्घ्य चढ़ाना है।।2।।

ऊँ ह्रीं दर्शन विनय भावनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांच महाव्रत पांच समिति, तीन गुप्तियाँ पाल रहे।
अंतर्मन की शुद्धि करके, तप में आप निहाल रहे।।
पाँच तरह के चारित्रधारी, भाव से उनकी विनय करें।
दश धर्मों आवश्यक को धरकर, कर्म का झरना तीव्र बहे।।3।।

ऊँ ह्रीं चारित्र विनय भावनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्दी गर्मी वर्षा में भी, कठोर तप को करते है।
भूख प्यास उपवास ऊनोदर, सह के समता धरते है।।
जंगल पर्वत वृक्ष के नीचे, ध्यान लगाते अहि निशि में।
ऐसे तपसी मिले जहाँ भी, विनय करूँ मैं हर ऋतु में।।4।।

ऊँ ह्रीं उपचार विनय भावनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

दर्शन ज्ञान औ तप विनय, चारित्र है संग साथ।
विनय तो मुक्ति द्वार है, मिले मोक्ष का पाथ।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

विनय धार मुक्ति गये, बने मुक्ति सम्राट।
झुक कर कैसे बड़े बने, यही धर्म का ठाठ।।

चौपाई

विनय भाव को धर्म कहा है, विनय वान संग धर्म रहा है।
बिना विनय के धर्म न होई, विनय से भाषा समिति पाई।।

विनय बिना ना ज्ञान है मिलता, ना सच्चाई का फूल है खिलता।
विनय वान जग प्रीति पाता, अविनय वाला जग दुख पाता।।

झुक कर आत्म विजय पाना है, अहंकार फिर बेगाना है।
विनय वाणी चुंबक बन जाती, सबको अपने पास बुलाती।।

विनय वाणी शुभ भाषा बोले, वो ही मुक्ति राज को खोले।
दर्शन विनय दे सम्यदर्शन, पापों का होता है घर्षण।।

ज्ञानी विनय से बनता ज्ञानी, ज्ञानधारी बन जायें ध्यानी।
त्याग तपस्या कर्म भगाये, कर्म नाश मुक्ति में जाये।।

संगत तपसी तप ही बढ़ाये, विनय भाव श्रद्धा दृढ़ पाये।
चारित्र कर्म का आना रोके, ना आते है कर्म के झौंके।।

श्रद्धा विनय को पैदा करती, विनय अहं भावों को हरती।
अहंकार तज विनय को धारो, विनय पालने सब कुछ पारो।।

देव शास्त्र गुरू विनय को करना, पाप ताप संताप को हरना।
आशीष इनका विनय से पाना, धर्म द्वारे भी विनय से जाना।।

यथायोग्य हो सबका आदर, नहीं किसी का करो निरादर।
क्रोध मान की वाणी त्यागो, माया लोभ के जाल से भागो।।

दोहा

मन में विनय के भाव रख, विनय वाणी से बोल।
काया भी झुककर रहे, द्वार मुक्ति का खोल।।

ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

विनय वाणी में जादू है, होते सभी प्रसन्न।
पाप मैल चढ़ता नहीं, भव्य होय आसन्न।।
।।परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनायै नमः

शील व्रतेष्वनतिचार पूजा

दोहा

छंद (तर्ज–राजा राणा..........)

स्वानुभूति में लीन हो, आत्मानंद का भाव।
शब्द भाव में खो गये, चिद् चैतन्य प्रभाव।।
मन जग भटकन छोड़कर, आतम में रम जाय।
शील भाव को पा लिया, शत्–शत् शीश झुकाये।।

ऊँ ह्रीं सर्वदोषरहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।

ऊँ सर्वदोषरहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ऊँ ह्रीं सर्वदोषरहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

चाल छंद (तर्ज– ऐ मेरे वतन के लोगो ......)

मन बाहर जाकर भटके, खाता कर्मों के झटके।
आतम स्वभाव को पायें, तो दुख सारे मिट जायें।।
कर शील भाव को धारण, है ये मुक्ति का कारण।
आतम की शुद्धि करता, जग के संकट भी हरता।।1।।

ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मन सावधान हो रहता, आत्मा को जाग्रत करता।
आतम शीतलता पाये, और परमानंद बहाये।।
कर शील भाव को धारण, है ये मुक्ति का कारण।
आतम की शुद्धि करता, जग के संकट भी हरता।।2।।

ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुभव अग्नि में तपे जो, औ प्रभु का नाम जपे जो।
नर से नारायण बन जायें, आतम अखंड़ को ध्याये।।
कर शील भाव को धारण, है ये मुक्ति का कारण।
आतम की शुद्धि करता, जग के संकट भी हरता।।3।।

ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जग में जो राग बढ़ाते, लुटकर वापस हैं आते।
ये भोग रोग बन जाते, चिन्ता और द्वेष बढ़ाते।।
कर शील भाव को धारण, है ये मुक्ति का कारण।
आतम की शुद्धि करता, जग के संकट भी हरता।।4।।

ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य को वैद्य बताते, इसे औषध सम ही खाते।
पर स्वादों ने भटकाया, इससे संसार बढ़ाया।।
कर शील भाव को धारण, है ये मुक्ति का कारण।
आतम की शुद्धि करता, जग के संकट भी हरता।।5।।

ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे प्रभा पुंज अघ नाशक, हे परम पुनीत प्रकाशक।
आतम आलोक जगा दो, आतम निधि दर्श करा दो।।
कर शील भाव को धारण, है ये मुक्ति का कारण।
आतम की शुद्धि करता, जग के संकट भी हरता।।6।।

ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दृढ़ संयम तप औ शील, कर्मों की निकाले कील।
करो क्रूर कर्म का अंत, बन जाऊँ शांत औ संत।।
कर शील भाव को धारण, है ये मुक्ति का कारण।
आतम की शुद्धि करता, जग के संकट भी हरता।।7।।

ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम अनुभूति जो पाई, जिनवाणी में वो गाई।
हो वीतराग जिन सृष्टा, आपहि हो आतम दृष्टा।।
कर शील भाव को धारण, है ये मुक्ति का कारण।
आतम की शुद्धि करता, जग के संकट भी हरता।।7।।

ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अपमान वश में रखना, तब शीलभाव सुख चखना।
वह ही जगत विजेता, वह ही है जग का नेता।।
कर शील भाव को धारण, है ये मुक्ति का कारण।
आतम की शुद्धि करता, जग के संकट भी हरता।।8।।

ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

श्रवण आत्म की सुनते है, नयना निरखे नाथ।
प्राण–प्राण में समा गये, झुका चरण में माथ।।
।।परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

शील की नव ही बाड़ है, रक्षा शील कराय।
अतिचार को दूर कर, शील भाव को पाये।।1।।

ऊँ ह्रीं नवबाड़रहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

राग सहित ना देखते, स्त्री का रंग रूप।
शील भाव धर ध्यान में, बने आत्म के भूप।।2।।

ऊँ ह्रीं रागरहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

राग वचन सुना कहीं, सुन के आवे राग।
शील भाव को धारने, धरते है वैराग।।3।।

ऊँ ह्रीं रागवचन रहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व भोग जो तज दिये, ना करते उन्हें याद।
शील भाव की शुद्धि में, करते तप औ त्याग।।4।।

ऊँ ह्रीं पूर्वभोग चिंतारहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

गरिष्ठ भोज न खावते, लेते शुद्ध आहार।
संयम में वृद्धि करें, धरते शुद्ध विचार।।5।।

ऊँ ह्रीं गरिष्ठ भोजनरहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

तन श्रृंगार को तज दिया, करें शील श्रृंगार।
आतम को सुन्दर बना, तज अब्रम्ह अंगार।।6।।

ऊँ ह्रीं तन श्रृंगाररहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

नारी जहाँ पे बैठती, व्रती वहाँ ना बैठ।
शील भाव पालन करें, शुद्ध भाव को देख।।7।।

ऊँ ह्रीं स्त्रीपलंगपरशयनरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

काम कथा ना करते है, धर्म कथा को धार।
धर्मशील ह्रदय बसा, आतम लेय निहार।।8।।

ऊँ ह्रीं काम कथा रहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्ण पेट भर खाते ना, जिससे नींद ना आये।
शील दोष को नाशने, जाग्रत वे हो जाये।।9।।

ऊँ ह्रीं उदरभरभोजनरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

काम चाह से दुख बढ़ै, चाह है दुख की राह।
शील सिन्धु डुबकी लगा, मुक्ति लगी निगाह।।10।।

ॐ ह्रीं कामचाहरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

काम वेदना जब बढ़ै, देती है संताप।
शील भाव चन्दन महा, हरता भव का ताप।।11।।

ॐ ह्रीं संतापकामबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

काम बाण मन में लगे, उच्चाटन हो जाये।
शुद्ध शील के धनी को, शत्–शत् शीश झुकाये।।12।।

ॐ ह्रीं उच्चाटनकामबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

काम बाण के वश हुआ, और न कछु सहाय।
शील व्रती चिन्ता न करें, आत्म शुद्ध हो जाये।।13।।

ॐ ह्रीं वशीकरणकामबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

काम से मोहित हो गया, स्थिर चित्त न होय।
स्थिर होकर शीलव्रती, पापकर्म को खोय।।14।।

ॐ ह्रीं मोहनकामबाणरहितशीलबाड़सहितशीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ निर्व. स्वाहा।

पंचबाण है काम के, इस बिन शील न होय।
शील बिना न धर्म है, नमू जोड़ कर दोय।।15।।

ॐ ह्रीं लौकिकपंचकामबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

कामबाण को तज दिया, आतम रूप विचार।
शीलवान को पूजता, उस में श्रद्धा धार।।16।।

ॐ ह्रीं पंचबाण कामरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

काम सहित होकर मनुज, स्त्री देख मुस्काय।
उस मुस्कान को तज दिया, शत्–शत् शीश झुकाये।।17।।

ॐ ह्रीं मुस्कानकामबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

बार–बार देखूँ उसे, मन उसमें ही जायें।
अवलोकन का दोष तज, शील की पूज रचायें।।18।।

ऊँ ह्रीं अवलोकनकामबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

नारी लख हँसता हुआ, मन में मोद मनाय।
हास्य काम को त्याग कर, शील पे श्रद्धा लाये।।19।।

ऊँ ह्रीं हास्य कामबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

स्त्री जैसा कहती है, वही करें दिन रैन।
आत्म स्वभाव में चालते, आतम में धर चैन।।20।।

ऊँ ह्रीं सैनबतावन कामबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

मंद हास्य करता हुआ, मन में सतावे काम।
शीलवान इसे त्याग के, होता है निष्काम।।21।।

ऊँ ह्रीं मंदहास्य कामरबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

वस्त्राभूषण भोजन दे, नारि को आदर देय।
शीलव्रती ये दोष तज, परिग्रह ही तज देय।।22।।

ऊँ ह्रीं स्त्रीसत्कार दोषरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

नारि मिलन की चाह में, करे अनेक उपाय।
अशुभ विचार के त्याग के, शीलवान सुख पाय।।23।।

ऊँ ह्रीं स्त्रीमिलापकामबाणरहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

वीरज क्षय कर हर्षता, दोष पे दोष बुलाय।
शीलवान निज ध्यान कर, आतम सुख को पाय।।24।।

ऊँ ह्रीं वीर्यक्षय अतिचार रहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

शीलव्रतों के दोष तज, निर्दोषी कहलाय।
अर्घ्य चढ़ा के भाव से, शत्–शत् शीश झुकायें।।

ऊँ ह्रीं सर्वदोष रहित शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

सोरठा

ज्ञान ध्यान मन वश करे, काम दूर हो जाये है।
शील भाव को उर धरे, शत्–शत् शीश झुकायें।।

शेर चाल (तर्ज– दे दी हमें आजादी....)

शीलधर्म शिरोमणि जगत में कहा।
शीलधर्म से प्रवाह, धर्म का बहा।।
शीलवान की तो सेवा, देवता करें।
शीलवान का सम्मान, जगत भी करें।।1।।

शीलधर्म चक्र किरण, तम को हटाये।
शील धर्म धारी ध्वजा, जग में फहराये।।
शील सत्य साथ में, शिवराह दिखाये।
शीलवाल को कोई न, इच्छा सताये।।2।।

शील आत्म शुद्धि करके, शांति में रहे।
आफत से सबको बचा, ज्ञान ध्यान में रहें।।
महिमा शीलवान की, जग ने गाया है।
शील धर के जीव ने, मुक्ति को पाया है।।3।।

सीता ने शील धर के, अग्नि नीर कर दिया।
औ सेठ सुदर्शन ने शूली सिंहासन बना दिया।।
मैंना ने धरा शील, कुष्ट दूर हो गया।
सोमा ने धरा शील, नाग हार हो गया।।4।।

शील चादर ओढ़ के, जग दुःख से बचता है।
जो शील न पाले, अनंत दुख भरता है।।
शीलवान चेहरे का तो तेज निखरता।
जो शील न पाले वो, दुख सिन्धु में पड़ता।।5।।

सहस्त्र अठारह शील के, दोष बताये।
श्री सिद्ध प्रभु पूर्ण करके, मुक्ति में जायें।।
शील के संग अन्य धर्म, पीछे आता है।
ऋद्धि सिद्धि साथ रहें, सौख्य पाता है।।6।।

दोहा

तप संयम स्वाध्याय संग, शील भाव को धार।
सोने सम यह शुद्ध करे, करता मुक्ति विहार।।
ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

पुद्गल की प्रीति तजो, तजो मोह का संग।
शील भाव तब आयेगा, छूटे कर्म का रंग।।
।।परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै नमः

अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग भावना पूजा

शंभू छंद

केवलज्ञानी अंतर्यामी, आतम का ज्ञान सिखाते है।
अभ्यास करो इसका हर क्षण, सत्मारग हमें दिखाते है।।
हम ज्ञान से ज्ञान बढ़ाने को, अब ज्ञान की पूजा करते है।
अभीक्षण ज्ञान को पाने को, प्रभु वाणी में चित धरते है।।

दोहा

केवलज्ञानी ने दिया, दिव्य ध्वनि में ज्ञान।
शास्त्र को पढ़ जानो इसे, मिट जाये अज्ञान।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

शंभू छंद

होता जल से कीचड़ ता फिर, जल से होती सफाई है।
हो ज्ञान से सुख–दुख का वेदन, तो ज्ञान से होगी दुख विदाई।।
इससे अभ्यास ज्ञान का कर, हमें सच्चे ज्ञान को पाना है।
अभीक्षण ज्ञान की राह पे चल, मुक्ति मंजिल तक जाना है।।1।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनाये जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

बिन ज्ञान के जग अपना लगता, जग तो संताप से भर देता।
अभ्यास सत्त करूँ ज्ञान का तो, चंदन सम शीतल कर देता।।
है सच्चे ज्ञान में शीतलता, खुशबू भी चंदन जैसे है।
अभ्यास ज्ञान का सत्त करूँ, मम आतम प्रभु के जैसे है।।2।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनाये संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम अखंड अविनाशी है, यह ज्ञान में ही बतलाया है।
उस ज्ञान पे श्रद्धा करके ही, प्रभु तेरी शरण में आया है।।
मम अंदर ज्ञान खजाना है, हे नाथ पता को बतला दें।
तुम जैसा ज्ञान का धनी बनूँ, मेरा धन मुझको दिलवा दें।।3।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनाये अक्षयपदप्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

जिस ज्ञान से इन्द्रिय सुख भोगूं, उस ज्ञान से मुक्ति पा सकता।
पर इन्द्रिय सुख में उलझा हूँ, खुद की शान्ति भूला बैठा।।
मम ज्ञान की बगिया खिले नित्य, निज आत्म ज्ञान की गंध मिले।
पुष्पों से पूजूं नाथ तुम्हें, अब सत्त ज्ञान का फूल खिले।।4।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनाये कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तन का भोजन जो देते है, पर भूखा रहता मम आतम।
आतम को ज्ञान का भोज मिले, तो बन जायेगी परमातम।।
तन का भोजन यदि तीन बार, तो तीन बार स्वाध्याय करों।
फिर देखों दुख क्या आ सकता, दुख संकट पल में स्वयं हरो।।5।।

ऊँ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनाये क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम है सच्चा ज्ञानदीप, हर जीव को राह दिखाता है।
बाहर का उजियाला भ्रम है, जग जीवों को भटकाता है।।
तत्वों का ज्ञान तो आवश्यक, इसके बिन कुछ न जाना है।
अखबार पढ़ो या खबर सुनो, यह सब अज्ञान तराना है।।6।।

ऊँ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनाये मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने अब तक दुखी किया, क्योंकि पर को अपना माना।
कर्मों के पतझड़ तुरन्त होय, जैसे ही खुद का प्रभु जाना।।
कर्मों को हमी बुलाते है, फल पाने पर फिर रोते है।
अब सत्त ज्ञान की पूजाकर, इन ही कर्मों को खोते है।।7।।

ऊँ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनाये अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का फल आकुलता है, पर ज्ञान निराकुल कर देता।
उत्कृष्ट ज्ञान वह मैं पाऊँ, तन मन की पीड़ा हर लेता।।
जिस ज्ञान से हो कर्मों का नाश, उस ज्ञान की मुझ पर कृपा करो।
अभ्यास ज्ञान का करके ही, श्रद्धा में ज्ञान के भाव भरो।।8।।

ऊँ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनाये मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्म ज्ञान की धारा तो, हर समय ही बहती रहती है।
ज्ञानामृत का जो जल पीले, तृप्ति चेतन में भरती है।।
हो ज्ञान–ज्ञान बस ज्ञान –ज्ञान, निज आत्म को प्रगटाना।
लख तेरा केवलज्ञान प्रभो, अब मुझको भी यह पाना।।9।।

ऊँ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनाये अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

ज्ञान चदरिया ओढ़ कर, आऊँ प्रभु के द्वार।
तभी प्रभु दर्शन मिले, मिले ज्ञान उपहार।।
।।परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

चौपाई

इन्द्रिय मन से जाने आतम, मतिज्ञान कहते परमातम।
मतिज्ञान को अर्घ्य चढ़ाऊँ, केवलज्ञानी को शीश झुकाऊँ।।1।।
ऊँ ह्रीं मतिज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
श्रुत ज्ञान की महिमा भारी, करो उपयोग शक्ति है न्यारी।
द्वादश अंग बताये जिनके, राज खोलता सारे जग के।।2।।
ऊँ ह्रीं श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अष्ट निमित्त से ज्ञान कराये, ज्ञान से अपना ज्ञान बढ़ाये।
ज्ञान का लाभ सभी को मिलता, ज्ञान सुमन अभ्यास से खिलता।।3।।
ऊँ ह्रीं अष्टनिमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
गगन में सूरज चंदा तारा, मेघ पटल भी करे इशारा।
अंतरिक्ष के निमित्त ज्ञानी, होते है वे ज्ञान के दानी।।4।।
ऊँ ह्रीं अंतरीक्ष निमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सोना चांदी अंदर भू के, धातु रत्न भी अंदर दिखते।
भौम ज्ञानी भी गगन की जाने, तप संयम शास्त्रों की माने।।5।।
ऊँ ह्रीं भौमनिमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
नर पशु अंग शुभाशुभ लक्षण, अंग निमित्त का ज्ञान विलक्षण।
ध्यान ज्ञान की सीमा नहीं है, ज्ञान ध्यान की महिमा कही है।।6।।
ऊँ ह्रीं अंगनिमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
नर पशु के सुर जाने सुनकर, फल बतला देते है गुनकर।
सुर निमित्त की महिमा न्यारी, ज्ञान से की है ये तैयारी।।7।।
ऊँ ह्रीं सुरनिमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
तिल मस्सा लहसुन जो देखा, उसका फल उस नर को लेखा।
व्यंजन निमित्त ज्ञान है सच्चा, फल बतलाता बिल्कुल अच्छा।।8।।
ऊँ ह्रीं व्यंजननिमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
स्वस्तिक ध्वज कलश हो तन में, लक्षण निमित्त फल जाने मन में।
लक्षण निमित्त से फल बतलाया, ज्ञानी चरण में अर्घ्य चढ़ाया।।9।।
ऊँ ह्रीं लक्षणनिमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्त्राभूषण पहने कैसे, फल उनका बतलाते वैसे।
छिन निमित्त भी अतिशयकारी, बतलाता है बारी–बारी।।10।।
ऊँ ह्रीं छिननिमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
रात्रि में क्या देखा सपना, सपनें में क्या–क्या था अपना।
सपने का फल सच बतलाये, अर्घ्य प्रभु के चरण चढ़ाये।।11।।
ऊँ ह्रीं स्वप्ननिमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

आठ अंग के निमित्त से, जाने ज्ञान से लोक।
सही ज्ञान आतम ध्याये, पावे मुक्ति लोक।।12।।
ऊँ ह्रीं अष्टांगनिमित्त श्रुतज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

भुजंग प्रयात छन्द(नरेन्द्र फणीन्द्रं......)

अवधिज्ञान इन्द्रिय, बिना जग को जाने।
क्षेत्र औ काल की, सीमा बखाने।।
हुआ ज्ञान सच्चा, जो आतम को ध्याया।
करूँ ज्ञान पूजा, चरण सिर झुकाया।।13।।
ऊँ ह्रीं अवधिज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
नयन मूंद इक देश, जाना है जिसने।
लखी वस्तु प्रत्यक्ष, माना है उसने।।
जरा ज्ञान आतम का, जिसने लगाया।
फिर ज्ञान से ज्ञान, को है बढ़ाया।।14।।
ऊँ ह्रीं देशावधि ज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
परम ज्ञान अवधि, परम देश जाने।
परम ज्ञान पाकर, परम वीर माने।।
परम ज्ञान आतम का, मुक्ति दिलाये।
परम ज्ञान आतम की, शुद्धि से आये।।15।।
ऊँ ह्रीं परमावधि ज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
असंख्यात लोक की, वस्तु को जाने।
सर्वावधि ज्ञान, उत्कृष्ट माने।।
आरोग्य ज्ञान तक, साथ में जाता।
करूँ पूजा भावों से, शीश झुकाता।।16।।

ऊँ ह्रीं सर्वावधि ज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन की सभी बात, दूजे की जानें।
नर के सरल भाव, मन पर्यय माने।।
हुआ ज्ञान सच्चा, जो आतम को ध्याया।
करूँ ज्ञान अभ्यास, सर को झुकाया।।17।।

ऊँ ह्रीं ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करे कोई टेढ़े, से टेढ़ा विचार।
विपुल ज्ञानी, जान के करते सुधार।।
सुज्ञान अंत तक, साथ में जावें।
करूँ पूजा भावों से, शीश झुकावें।।18।।

ऊँ ह्रीं विपुलमति मनःपर्यय ज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सदा ज्ञान अभ्यास, करना सिखाये।
तब तक करो, जब तक केवल न पाये।।
कैवल्य ज्ञान की, महिमा है न्यारी।
झलके सभी लोक, अज्ञान हारी।।19।।

ऊँ ह्रीं केवलज्ञान ज्ञानोपयोग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

गीता छंद (तर्ज– प्रभु पतित पावन)

आतम खजाना ज्ञान, अभ्यास करके पाइये।
संकट विपत्ति ज्ञान दूर कर, सुख की शरण में आइये।।
भगवान ने पाया है जब तो, हम क्यों पा सकते नहीं।
पुरूषार्थ सच्चा कीजिये, प्रगटेगा केवलज्ञान ही।।

ऊँ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनायै महार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

ज्ञानाभ्यास को जो करें, जयमाला को पाये।
वर्तमान में भक्ति से, जयमाला को गाये।।

शेर चाल (तर्ज– दे दी हमें आजादी....)

ज्ञानोपयोग जो करें, अज्ञान नशाये।
ज्ञानोपयोग जो करे, भवनाश करायें।।
ज्ञानोपयोग जो करे, वह मोह भगाये।
ज्ञानो पयोग जो करें, वह सौख्य को पायें।।1।।

ज्ञानोपयोग जीव में, वैराग्य बढ़ाये।
ज्ञानोपयोग राग द्वेष, कम ही कराये।।
ज्ञानोपयोग सप्त तत्व, ज्ञान सिखाये।
ज्ञानोपयोग जड़ औ चेतन, भेद कराये।।2।।

ज्ञानोपयोग सर्वभ्रम को, दूर कराये।
ज्ञानोपयोग ज्ञान के सब, दोष मिटाये।।
ज्ञानोपयोग धर्म धैर्य, भावना लाये।
ज्ञानोपयोग शांति दे, अशांति हटाये।।3।।

ज्ञानोपयोग पाप औ, संताप मिटाये।
ज्ञानोपयोग, अशुभ कर्म, को भी नशाये।।
ज्ञानोपयोग व्रत नियम, संयम को बढ़ाये।
ज्ञानोपयोग सहज में, शुभ भाव बनाये।।4।।

बस ज्ञान ही हमारा सच्चा, मित्र बताया।
संसार के सिन्धु से तिरा, सौख्य दिलाया।।
गर ज्ञान ना हो आत्म को, हम कैसे जानते।
गर ज्ञान न हो परमात्म को, हम कैसे मानते।।5।।
गर ज्ञान न होता तो, कैसे पाप से बचते।
गर ज्ञान ना होता तो, कैसे प्रभु से मिलते।।
प्रभु वीर का उपकार, कि हमें ज्ञान दे दिया।
आचार्य उस ज्ञान को, लिपिबद्ध कर दिया।।6।।
नर देह का पुरूषार्थ, मुक्ति ले के जाता है।
करो ज्ञान अभ्यास, शांति देके जाता है।।
जिसने न किया ज्ञान, हीरा जन्म खो दिया।
जिसने न किया ज्ञान, पाप बीज बो दिया।।7।।

दोहा

ज्ञान से मिलता आत्म सुख, हो आनंद अपार।
ज्ञानाभ्यास हर क्षण करो, भव ना हो बेकार।।

ऊँ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनायै पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

सतत शास्त्र अभ्यास से, संयम दृढ़ हो जायें।
सम्यग्दर्शन प्राप्त कर, मुक्ति को पा जायें।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं ज्ञानोपयोग भावनायै नमः

संवेग भावना पूजा

शंभू छंद

संसार दुखों का सागर है, न सुखी नजर कोई आता है।
जो इन्हें देख वैराग्य धरे, भव भय दुख से घबराता है।।
संवेग भावना उसे कहा, इसको भरकर भगवान बने।
आव्हानन करते इनका हम, मम हृदय में आकर भाव भरें।।

ऊँ ह्रीं संवेग भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं संवेग भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं संवेग भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

गीता छंद (तर्ज– प्रभु पतित पावन)

मैं जानता हूँ की प्रभो, मैं मल औ मैल से हूँ भरा।
इस तन को धोता रोज मैं, पर आत्मा को भूलता।।
संसार दुख से डर प्रभो, संसार तजने आया हूँ।
जल से प्रभो को पूजता, आतम को भजने आया हूँ।।1।।

ऊँ ह्रीं संवेग भावनाये जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं जड़ औ चेतन भेद ना कर, मान जड़ पर है किया।
मैं जड़ पदार्थ का मोह कर, ना आत्मा का सुख लिया।।

प्रभु तुमने सारे जग को तज, बस आत्म अपना माना है।
चन्दन से पूजूँ नाथ तुमको, आत्म भाव को माना है।।2।।
ऊँ ह्रीं संवेग भावनाये संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
चारों गति में भटका हूँ, गतियों के चक्कर खाये है।
हे नाथ तुम कहाँ रहते हो, यह पता करने आये है।।
अक्षय नगर पाने को भगवन, क्षय नगर को छोड़ता।
अक्षत से पूजूँ नाथ तुमको, आत्म तुमसे जोड़ता।।3।।
ऊँ ह्रीं संवेग भावनाये अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
इन्द्रिय सुखों ने युँ लुभाया, मन धरम न करता है।
तुमसे ही माँगे भोग मैनें, गल्ती मैं तो करता हूँ।।
भोग के संग रोग है, और धर्म संग में सुख बढ़े।
यह श्रद्धा दृढ़ हो जाये मेरी, पुष्प से पूजा करें।।4।।
ऊँ ह्रीं संवेग भावनाये कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
जिव्हा यदि प्रभु नाम ले तो, भव ये सार्थक होयगा।
पर जिव्हा स्वादों में है उलझी, नर जनम को खोयगा।।
जिव्हा पे संयम स्वाद तज के, मौन संग में ले लिया।
आतम का सुख दौड़ा जो आया, मुक्ति को पाये जिया।।5।।
ऊँ ह्रीं संवेग भावनाये क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
आँखों को बंदकर ध्यान में, अंदर न जा पाते प्रभो।
अज्ञान तम आतम में छाया, तुझको न लखते विभो।।
स्वाध्याय भक्ति तप औ संयम, ज्ञान भा को देता है।
ले दीप तुमको पूजता, अज्ञान तम हर लेता है।।6।।
ऊँ ह्रीं संवेग भावनाये मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
मिट्टी की काया एक दिन, मिट्टी में जाके समायेगी।
मिट्टी की काया को सजाते, अज्ञानी में गिनती आयेगी।।
मिट्टी की काया तप करें तो, आत्मा सोना बने।
औ आत्मा का ज्ञान कर लो, तो नहीं रोना पड़े।।7।।
ऊँ ह्रीं संवेग भावनाये अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
बीज जैसा बोयेंगें तो, फल ही वैसा आयेगा।
जब पाप दुख जो बोया है, फल सुख कहाँ से पायेगा।।

हर पल मिले कर्मों का फल, अब कर्म अच्छे करना है।
फल मुक्ति का पाने प्रभो, ले फल से पूजा करना है।।8।।
ऊँ ह्रीं संवेग भावनाये मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

चिंतन ने आतम ध्यान की, कलियाँ खिला सुख भर दिया।
चिंतन से चिंता मिटती है, दुख को हटा सुख भर दिया।।
तत्वों का चिंतन आत्मा को, परम शांति ही देता है।
मैं अर्घ्य से पूजूँ प्रभो, अज्ञानता हर लेता है।।9।।
ऊँ ह्रीं संवेग भावनाये अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

दुःख हजारों तरह के, सहता है हर जीव।
दुख की दवा तो धर्म है, खाये क्यों ना जीव।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

चाल छंद (तर्ज–ऐ मेरे वतन के लोगों...)

भयभीत करें संसारा, नहि दुख का कोई पारा।
संसार से मोह हटाओ, संवेग भावना भाओ।।1।।
ऊँ ह्रीं संसार भयभीत संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
दुख कहीं न छोड़े पीछा, स्वर्गों में साथ में जाता।
सुखी सिद्धालय के वासी, वे अजर अमर अविनाशी।।2।।
ऊँ ह्रीं देवगति दुखभय विरकाय भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
हर मनुज है दुख भंडारा, ऊपर से लगता प्यारा।
चिन्ता तो सदा सताये, अब भाव संवेग के भाये।।3।।
ऊँ ह्रीं मनुष्यगति दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
इक पल जहाँ नहीं है शांति, हर क्षण है क्लेश औ क्रांति।
उस नरक से भय को खाओ, संवेग भावना भायो।।4।।
ऊँ ह्रीं नरकगति दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
बन पृथ्वी काय दुख पाया, छेदन भेदन दुख पाया।
चिंतन इस दुख का करना, संवेग भाव से भरना।।5।।

ऊँ ह्रीं पृथ्वीकाय दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल कायिक बन दुख पाया, कर्मों ने बहुत सताया।
पाया अब मानुष तन को, संवेग सुधारे मन को।।6।।

ऊँ ह्रीं जलकाय दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि बन खूब जला हूँ, कभी सुख से नहीं मिला हूँ।
जग के दुख चिंतन करना, संवेग भावना भाना।।7।।

ऊँ ह्रीं अग्निकाय दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन हवा सदा ही बहता, अब तक न पाई साता।
अब तो इन दुख से छूटूँ, कर भवक्षय दुख को काटूं।।8।।

ऊँ ह्रीं पवनकाय दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन वनस्पति दुख पाया, तन छेद भेद कटवाया।
यह दुख मैं ना प्रभु चाहूँ, संवेग भावना भाऊँ।।9।।

ऊँ ह्रीं वनस्पतिकाय दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई (तर्ज–चालीसा)

एक श्वांस में अठरह बार, जन्म मरण का दुःख अपार।
ऐसे दुख से हूँ भयभीत, प्रभु चरण के गाऊँ गीत।।10।।

ऊँ ह्रीं निगोद दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इल्ली लट औ कौड़ी संख, द्विइन्द्रिय बन दुःख असंख।
ऐसे दुख से हमें निवारो, धर्मज्ञान से भाव सुधारो।।11।।

ऊँ ह्रीं द्वि–इन्द्रिय दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चींटी खटमल औ तिरूला, ति इन्द्रिय बन दुख पा कूला।
दुख तजने का यही उपाय, श्री जिनवर की शरण में आय।।12।।

ऊँ ह्रीं त्रय–इन्द्रिय दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मक्खी मच्छर भौंरा टिड्डा, दुख पाने के ये हैं अड्डा।
धर्म ही दुख को दूर करेगा, धर्मात्मा पापों से डरेगा।।13।।
ऊँ ह्रीं चतुरिन्द्रिय दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नर पशु देव न और नारकी, सदा उठावे दुःख पालकी।
सहस तरह के दुखों को पाये, जब तक भाव संवेग न भाये।।14।।
ऊँ ह्रीं पंचेन्द्रिय दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पग ऊपर औ सिर था नीचे, नौ माह तक उल्टे लटके।
गर्भ जन्म के दुख है भारी, किन्तु धर्म की शक्ति न्यारी।।15।।
ऊँ ह्रीं जन्म दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लाखों बिच्छू डसै दुख ऐसा, मरण समय दुख होता वैसा।
जन्म मरण के दुख से डरता, धर्म ही इस दुख कष्ट को हरता।।16।।
ऊँ ह्रीं मरण दुःख विरक्ताय संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं चाहूँ जिस वस्तु व्यक्ति, जिसमें हो मेरी आसक्ति।
इष्ट वियोग हो दुखी हुआ हूँ, भाव संवेग को पाय लिया हूँ।।17।।
ऊँ ह्रीं इष्टवस्तु वियोग दुःखरहित संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यक्ति वस्तु जिसे न चाहूँ, पास रहें मेरे दुख पाऊँ।।
अब इस दुख से मैं घबराता, मन में धर्म भावना आता।।18।।
ऊँ ह्रीं अनिष्टवस्तु वियोग दुःखरहित संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वायु कफ औं पित्त सतावे, बीमारी बन घना दुख देवें।
बीमारी दुख छोड़ने आया, भाव संवेग आत्म में भाया।।19।।
ऊँ ह्रीं पीड़ा संयोग दुःखरहित संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

लगातार दुख बारिश होती, बीमारी की खारिश होती।
सभी दुखों का एक ही हल है, धर्म से छूटे कर्म मैल है।।20।।

ऊँ ह्रीं अनेक दुखमय जगत अवलोकन रहित संवेग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

देखा इस संसार को, दुख है अपरम्पार।
हूँ उदास संसार से, होने भव से पार।।

पद्धरि छंद (तर्ज– ये धर्म है आतम.........)

संसार दुखों का डेरा है, ये जगत करम का फेरा है।
चौरासी लाख योनि दुखमय, आभास सा लगता है सुखमय।।1।।

जहाँ–जहाँ नजर ये आती, दुखों की कहानी दिखती।
ये जग स्वारथ का मेला है, कर्मों ने खेल ये खेला है।।2।।

सुख में सारे ये मीत बने, सब सपने दिखाये अपने लगे।
पर दुख आते ही गये भाग, तब दुख ने दिखाया ज्ञान पाथ।।3।।

ये जीव न दुख से डरता है, बस दुख आने पर रोता है।
फिर काम पुनः वह करता है, पापों की गठरी भरता है।।4।।

वह घूम रहा चारों गतियाँ, ना मानी जिनवाणी बतियाँ।
इन्द्रिय सुख में ही उलझा है, सच्चा सुख तो ना जाना है।।5।।

सोलह भाव संवेग भाव, दुख दिखा दिखावें सत्य छांव।
जग दुख से क्यों न डरते हो, आतम दुख क्यों न हरते हो।।6।।

दुख मिले न ऐसा काम करो, सुख मिले जो ऐसा धर्म धरो।
संवेग भाव यह समझाता, तब धर्म में आती है दृढ़ता।।7।।

जप त्याग तपस्या होती है, तब आतम सुख कली खिलती है।
संवेग भावना को भाओं, वीरा की छाया में जाओं।।8।।

दोहा

आत्म स्वरूप विचार कर, जग दुख से बच जायें।
संवेग भाव को अर्घ्य चढ़ा, शत्–शत् शीश झुकाये।।

दुख का आदि अंत है, सुख हो सके अनंत।
ऐसा पुरूषारथ करो, मिले मुक्ति का पंथ।।

ॐ ह्रीं संवेग भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
जाप्य मंत्रः– ॐ ह्रीं संवेग भावनायै नमः

त्याग भावना पूजा

शंभू छंद (तर्ज–भला किसी का कर.....)

संसार में लेकर क्या आया, और लेकर के क्या जाऊँगा।
इस ज्ञान को अंतर्मन समझे, तब त्याग भावना भाऊँगा।।
मेरे गुण वैभव ज्ञान चरित्र, दर्शन और सुख का धारी हूँ।
बाकी सब वस्तु का त्याग करूँ, जिन धर्म की महिमा न्यारी है।।

ॐ ह्रीं त्याग भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ॐ ह्रीं त्याग भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं त्याग भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

नाराज छंद (तर्ज– नीर गंध अक्षतान.........)

आत्मा पे कर्म मैल, मैं तो तन को धो रहा।
आत्म धर्म ना किया, मनुज तन को खो रहा।।
लोभ से संग्रह करूँ, तो पाप कर्म आयेगा।
त्याग भावना भरूँ, आत्म धर्म भायेगा।।1।।

ॐ ह्रीं त्याग भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म ताप देता है, उपचार बाह कीना है।
धर्म शीतल न किया, बाह्व में ही जीता है।।
त्याग धर्म श्रेष्ठ है, मुक्ति में ले जायेगा।
त्याग की पूजा करूँ, आत्म शांति पायेगा।।2।।

ॐ ह्रीं त्याग भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत स्वच्छ तंदुलो से, पूजा करने आवता।
आत्म श्वेत स्वच्छ हो, भाव मैं ये भावता।।
लोभ के बादल हटे तो, आत्मा ये स्वच्छ हो।
त्याग भाव संग हो तो, मुक्ति मार्ग गच्छ हो।।3।।

ॐ ह्रीं त्याग भावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

भोग भावना भवों में, आत्म को ले घूमती।
आत्म ध्यान ध्या के देखों, सुख अनंत पावती।।
त्याग भाव पुष्प के सम, आत्म को महकाती है।
त्याग भाव पूजता, मुक्ति सुख दिखाती है।।4।।
ऊँ ह्रीं त्याग भावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भूख–भूख नित लगे, भोज को है खावते।
भूख दवा तप नियम है, त्याग मन न भावते।।
त्याग भाव कर के नित, भूख को मिटाना है।
त्याग की पूजा करूँ मैं, प्रभु शर्ण आना है।।5।।
ऊँ ह्रीं त्याग भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

मोह का अंधेरा है, सत्य नाही दीखता।
मोह ढीला जब पड़े, सत् समझ में आवता।।
आत्मज्ञान दीप से, जग के तम को हरना।
त्याग भाव पूज के, मुक्ति सुख को वरना।।6।।
ऊँ ह्रीं त्याग भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म की आंधी चले, मैं तो उसमें उड़ गया।
राग द्वेष भावना के, संग मैं तो बह गया।।
त्याग भाव शक्ति देवें, आत्म को जाने जिया।
त्याग की पूजा करूँ मैं, धर्म आयेगा हिया।।7।।
ऊँ ह्रीं त्याग भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

साधना औ तप का फल, मोक्ष है बतावतै।
त्याग धर्म साथ हो तो, शीघ्र मोक्ष जावते।।
त्याग भाव पूजा करके, त्याग का पालन करूँ।
महिमा महान त्याग की, दुष्ट कर्म को करूँ।।8।।
ऊँ ह्रीं त्याग भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य ले के आया, अष्ट भूमि पावने।
अष्ट कर्म को नशूँ, अष्ट गुण को पावने।।
त्याग भाव गुण की पूजा, करके मैं हर्षावता।
श्रद्धा भाव भर के आया, शीश मैं झुकावता।।9।।
ऊँ ह्रीं त्याग भावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

त्याग भावना शुद्ध है, आतम शुद्ध बनाये।
त्याग बिना ना मार्ग है, शत्–शत् शीश झुकाये।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

हिंसा भाव का त्याग कर, देवे अभय का दान।
दया भाव मन में रखें, मिले जीवन का वरदान।।1।।
ऊँ ह्रीं अदया त्याग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सबका हितकारी कहा, शास्त्र ज्ञान का दान।
आत्म सुखों को पाये के, देता सम्यग्ज्ञान।।2।।
ऊँ ह्रीं शास्त्र दानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
धर्मात्मा को है दिया, अन्न पोषण आहार।
ज्ञान ध्यान स्वाध्याय संग, किया धर्म प्रचार।।3।।
ऊँ ह्रीं अन्नदानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
रोगी तन को औषधि दे, बीमारी हो दूर।
औषध दान इसको कहा, देवे सुख भरपूर।।4।।
ऊँ ह्रीं औषध दानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
औषध शास्त्र अभय कहा, और कहा आहार।
दान चारों ही दीजिये, करके शुद्ध विचार।।5।।
ऊँ ह्रीं चार प्रकार दान भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
करूणा दिल में है भरी, पाले अहिंसा धर्म।
हिंसा को त्यागा तभी, होवे स्वभाव नर्म।।6।।
ऊँ ह्रीं हिंसा त्याग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सत्य धर्म पालन किया, किया असत्य का त्याग।
सत्य सूर्य परकाश में, मिले मुक्ति का बाग।।7।।
ऊँ ह्रीं असत्य त्याग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
बिना दिये न लेते है, किया चोरी का त्याग।
व्रत अचौर्य की भावना, करे राग का त्याग।।8।।
ऊँ ह्रीं चोरी त्याग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम भाव को वश करें, करें कुशील का त्याग।
ब्रम्ह भाव पाने कहे, मुक्ति पंथ में लाग।।9।।
ऊँ ह्रीं कुशील त्याग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
परिग्रह चिंता देता है, चिंता चिता समान।
त्याग परिग्रह का किया, आत्म गुणों को जान।।10।।
ऊँ ह्रीं परिग्रह त्याग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
तन से ममता छोड़ दी, छोड़ा है श्रृंगार।
कष्ट परीषह सहते है, कर आतम का श्रृंगार।।11।।
ऊँ ह्रीं तन ममत्वत्याग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
राज्य त्याग मुनि पद लिया, बचा है आतम राम।
उसी आत्म को ध्यावते, कर आतम विश्राम।।12।।
ऊँ ह्रीं राजभोग त्याग भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

दोहा

त्याग बिना न सुख मिले, नहीं मोक्ष का द्वार।
राग त्याग से त्याग है, सत्य का करो विचार।।13।।
ऊँ ह्रीं त्याग भावनायै महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

त्याग करन में ना डरो, करो दृढ़ता से त्याग।
त्याग ही सुख का द्वार, त्याग ही सुख बाग।।1।।

शेर चाल (तर्ज– दे दी हमें आजादी....)

त्याग धर्म धारी की, पूजा को करेगे।
और त्याग भावना का, सम्मान करेगें।।
त्याग ने इंसान को, भगवान बनाया।
और त्याग ने कर्मों को नाश, मोक्ष दिलाया।।2।।
त्याग वज्र कर्म गिरी, को है तोड़ता।
त्याग जगत से हटा के, निज से जोड़ता।।
त्याग करके मन में शान्ति, खूब आती है।
त्याग भावना से समता पास आती है।।3।।

जिस वस्तु का किया है त्याग, राग छूटता।
आस्त्रव रूका संवर हुआ, है कर्म टूटता।।
सप्त व्यसन त्याग, श्रद्धा और बढ़ाओ।
औ अष्ट मूलगुण को धार, धर्म बढ़ाओ।।4।।
कल्पवृक्ष के समान, फल देता जीव को।
औ कामधेनु के सभा, दृढ़ करें नींव को।।
त्यागी की पूजा तो, इन्द्र चक्री भी करे।
औ सारे रत्न निधियाँ, हाथ जोड़ के खड़े।।5।।
त्याग शक्ति नहीं, त्याग भाव लाइये।
त्याग भाव को बढ़ा के, त्याग कीजिये।।
मुनिराज ने सब त्याग किया, ध्यान लगाया।
निश्चिन्त्य हो शंका रहित, हो आत्म को पाया।।6।।
त्याग की महिमा महान, देव गाते है।
इस त्याग भावना को लेके, हम भी आते है।।
पर वस्तु त्याग कर सकूँ, मुझे शक्ति दीजिये।
संसार से बचा के, मुझे शरण लीजिये।।7।।

दोहा

तारण तरण है त्यागधन, तीर मुक्ति ले जायें।
त्याग भाव से पूजता, शत्–शत् शीश झुकायें।।
ऊँ ह्रीं त्याग भावनायै पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

अपना जो कुछ है नहीं, उसका करना त्याग।
मोह हटा कर देख लो, जाग रे आतम जाग।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं त्याग भावनायै नमः

तप भावना पूजा

शंभू छंद

सूरज की गर्मी ने धरती के कण–कण को है शुद्ध किया।
तपा–तपा के फल अनाज और पानी को भी शुद्ध किया है।।
तप की शक्ति से हर आतम, शुद्ध बुद्ध हो सकती है।
तन की भावना भाओ मन से, कर्म मैल खो सकती है।।

ॐ ह्रीं तप भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं तप भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं तप भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

शंभू छंद

जन्मों से प्यास सताती है, पानी पीकर न तृप्त हुआ।
तृप्ति तप से ही आयेगी, सच्चे मन से तप करे जिया।।
उत्थान राह मुझे मिली मगर, आलय प्रमाद में खो देता।
अब जल लेकर पूजा करते, जो बीज मुक्ति का बो देता।।1।।

ॐ ह्रीं तप भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने जलाया आतम को, चन्दन शीतलता क्या देगा।
तप से शीतलता आयेगी, कर्मों के ताप को हर लेगा।।
प्रतिकूल परिस्थिति में शांति, रखकर के तप को करना है।
चन्दन से पूजूँ नाथ तुमहें, ज्वालायें कर्म की हरना है।।2।।

ॐ ह्रीं तप भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्जवल आतम औ शुभ्र धवल पर, पाप कर्म से मैली है।
अक्षय अखंड अविनाशी है, पद पाने कष्ट झेली है।।
आतम स्वरूप अपना निहार, अक्षय आतम की सुधि आई।
अक्षत से पूजूं तप शक्ति, तप की निधियां है अब पाई।।3।।

ॐ ह्रीं तप भावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

हर फूल कली बन खिलता है, मुरझा के बाद में गिर जाता।
जीवन सिद्धांत भी ऐसा है, भोगी मन समझ क्यों न पाता।।
क्षण भंगुर जीवन में से ही, आतम के रूप को पाना है।
तप करूँ ब्रम्ह आराधन को, उस मुक्ति लोक को पाना है।।4।।

ॐ ह्रीं तप भावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सागर समान पानी पिया, पर्वत जितना है अन्न खाया।
पर भूख प्यास तो मिटी नहीं, तप से उपाय करने आया।।
अब क्षुधा रोग की दवा को खा, आतम को सुखी बनाना है।
संयम तप बिन ना रोग मिटे, तप ऋद्धि सिद्धि को पाना है।।5।।
ऊँ ह्रीं तप भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

तप त्याग अहिंसा दीप सदा, आतम में उजाला करता है।
इसका प्रकाश आतम के संग, स्वार्गापवर्ग तक जाता है।।
कर घोर तपस्या ज्ञान दीप, कर्मों का अंधेरा दूर करें।
ले दीप चरण पूजा करता, आतम में ज्ञान प्रकाश भरे।।6।।
ऊँ ह्रीं तप भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की सांकल ना टूटे, इस जग में आना जाना है।
कर्मों का क्षय जब तक ना हो, यह जीव तो यंत्र समाना है।।
दे कर्म फलों को हम भोंगे, पुरुषार्थ आत्म न करता है।
ये कर्म चलाये तन मशीन, तप आतम जाग्रत करता है।।7।।
ऊँ ह्रीं तप भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चिन्ता करने या गाने से, क्या चिंताये मिट सकती है।
प्रज्ञा से कर्म बंध काटो, तो सच्चा सुख पा सकती है।।
मुक्ति फल पाने संयम तप, पुरूषार्थ हमें करना होगा।
कर्मों के विषफल तजने को, तप भावना को भाना होगा।।8।।
ऊँ ह्रीं तप भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

तपते सूरज से फूल खिले, तप से ही मुक्ति मिलती है।
तप से मिट्टी गागर बनती, तप से हिमगिरि पिघलती है।।
तप से सच्चा सुख मिलता है, तप से तीर्थंकर बनते है।
तप भाव बनाओ दृढ़ता से, तप की पूजा हम करते है।।9।।
ऊँ ह्रीं तप भावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

जहाँ धूप वहाँ छांव है, तप से शीतल होय।
यही कर्म की रीति है, बीज धर्म का बोय।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

चाल छंद (तर्ज–तुम सम्मेद शिखर)

उपवास भक्ति से करते, निज आतम गांव विचरते।
अनशन तप अतिशयकारी, तन मन की पीड़ा हारी।।1।।
ऊँ ह्रीं अनशन तप भावनायै निर्वपामीति स्वाहा।
यदि भूख से कम ही खाया, ऊनोदर तप बतलाया।
भोजन के राग को त्यागा, औ धर्म पंथ में लागा।।2।।
ऊँ ह्रीं ऊनोदर तप भावनायै निर्वपामीति स्वाहा।
पूरा हो नियम जो मेरा, तो लूंगा मैं आहारा।
व्रत परिसंख्यान की महिमा, औ देव भी गाते गरिमा।।3।।
ऊँ ह्रीं व्रत–परिसंख्यान तप भावनायै निर्वपामीति स्वाहा।
इक–इक रस नित्य ही त्यागो, जिव्हा पर विजय भी पावो।
दुख सागर को है तरना, तप संयम को है वरना।।4।।
ऊँ ह्रीं रस–परित्याग तप भावनायै निर्वपामीति स्वाहा।
कभी बैठ कभी हो ठाड़े, नये–नये आसन को माड़े।
कीनी आसन की सिद्धि, हुई ध्यान में अद्भुत वृद्धि।।5।।
ऊँ ह्रीं विविक्त शय्यासन तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
कष्टों को स्वयं बुलायें, और समता भाव बनाये।
करें स्वयं–स्वयं की परीक्षा, धर काय क्लेश की दीक्षा।।6।।
ऊँ ह्रीं कायक्लेश तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
यह तप बाहर दिखते है, अंदर समता धरते है।
तप का फल पाई समता, औ तन से छोड़ी ममता।।7।।
ऊँ ह्रीं बाह्य तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चर्या में दोष लग जायें, प्रायश्चित्त भाव बनाये।
लेकर पूरा करते हैं, तप से इसको हरते हैं।।8।।
ऊँ ह्रीं प्रायश्चित्त तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
देवागम विनय को करते, गुरू चरणों में आ झुकते।
मन वच काया के साधा, अविनय की नाही बाधा।।9।।
ऊँ ह्रीं विनय तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन मन में खेद जो आया, कर सेवा दूर कराया।
तप जानो वैय्यावृत्ति, बन जाते है वे हस्ती।।10।।
ऊँ ह्रीं वैय्यावृत्य तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
जिनवाणी सदा ही पढ़ना, मुक्ति पथ आगे बढ़ना।
स्वाध्याय को तप बतलाया, पापों को दूर कराया।।11।।
ऊँ ह्रीं स्वाध्याय तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
काया तज ध्यान में रहते, कायोत्सर्ग इसको कहते।
हो लीन आत्म को ध्याया, पूजा का थाल ले आया।।12।।
ऊँ ह्रीं व्युत्सर्ग तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
नये–नये विषयों पर चिंतन, करते है आतम मंथन।
यह ध्यान मोक्ष ले जाये, अर्घ्यों से पूज रचायें।।13।।
ऊँ ह्रीं ध्यान तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

दोहा

कर्मगिरी को तोड़ने, तप है वज्र समान।
तपे बिना सुख ना मिले, चाहे दोनों जहान।।
ऊँ ह्रीं द्वादश तप भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

पद्धरि छंद (तर्ज–से धर्म है.........)

सूरज तपता धरती तपती, दीपक की ज्योति भी तपती।
बिन तपे प्रकाश न होता है, बिन तपे ये तम न खोता है।।1।।

तप से जग के फल पाते है, तप से अनाज भी आते है।
तप ही तो भोज बनाता है, तप ही तो ओज कराता है।।2।।

बिन तप जग ना चल सकता है, बिन तप फल न पक सकता है।
बिन तप जल शुद्ध न होता है, बिन तप मन बुद्ध न होता है।।3।।

तप की शक्ति की पहचानो, जिनवर की बात सभी मानो।
आतम तप से भगवान बने, शैतान भी तो इंसान बने।।4।।

तप बिन आतम ना सुख पाये, तप बिन सम्मान न मिल पाये।
तप को जानो गहराई से, आशय समझो मन लाई के।।5।।
तप का रहस्य प्रभु ने जाना, तप कर आतम दुख को हाना।
हम भी दुख दूर तो कर सकते, तप की शक्ति से भर सकते।।6।।

दोहा

क्रोध मान माया तजो, करो लोभ का त्याग।
अंतर मन शुद्धि करो, खिले आत्म का बाग।।

ऊँ ह्रीं तप भावनायै पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

बारह तप को धारकर, मुक्ति मंजिल पाये।
'स्वस्ति' को शक्ति मिले, शत्–शत् शीश झुकाये।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं तप भावनायै नमः

साधु समाधि भावना पूजा

दोहा

हर जनम में मृत्यु पाई है, पर मरना हमें न आता है।
मृत्यु तो एक दवाई है, पर खाना हमें न आता है।।
मृत्यु को समाधि बना साधु, मन्दिर पर कलश चढ़ाते है।
साधु समाधि निर्वाण बना, निज आनंद से भर जाते है।।

ऊँ ह्रीं साधु समाधि भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं साधु समाधि भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं साधु समाधि भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

निःसार विषय निःसार भोग, यहाँ सार नजर ना आता है।
निज हित का मौका मिला हमें, निज धर्म न हमको भाता है।।
साधु समाधि के भाव बना, साधु समाधि पूजा करता।
भव तरने को यह नौका है, जल चढ़ा आत्म पावन करता।।1।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर की वाणी चन्दन सी, जो आत्म में शांति देती है।
तत्वों का ज्ञान करा कर के, शीतल–शीतल मन करती है।।
मम जन्म कहाँ पर होयेगा, यह हाथ ना मेरे होता है।
साधु समाधि के भाव करें, तो जन्म सफल हो जाता है।।2।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

मरना न चाहे सब जीना, कर्मों से मर–मर जाते है।
भावों से पल–पल मरते है, मरने पर आँसू बहाते है।।
आतम तो मर ना सकता है, है कर्म योग ये जन्म मरण।
साधु समाधि की भावना कर, अक्षय अविनाशी आत्म वरण।।3।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि भावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

भोगों की इच्छा मरी नहीं, मर–मर के जन्म अनेक धरे।
भोगों को जितना भोगा है, कष्टों के पेड़ तो हुये हरे।।
भोगों से राग तजेगें तो, मन आत्म धर्म को पायेगा।
हो कामबाण का नाश प्रभो, साधु समाधि को भायेगा।।4।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि भावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खा–खाकर भी भूखे रहते, है अर्थ नहीं ये आत्म भोज।
ज्ञानामृत भोजन मिल जाये, तृप्ति आवे पा आत्म ओज।।
स्वाध्याय से आतम भोजन हो, आनंद न रस के स्वादों में।
चिंता आकुलता दूर होय, खोते आतम आल्हादों में।।5।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

यह जीव कभी माता बनता, कभी पिता बना कभी पुत्र बना।
हर जनम में अपना मान–मान, आतम पर छाया मोह घना।।
इस मोह बीच में निज आतम, का रूप नजर न आया है।
हो ज्ञान दीप का उजियाला, निज भाव सुधा ले आया है।।6।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो तप के कष्ट न सह सकते, वे सच्चा सुख ना पा सकते।
वे बड़े कभी ना बन सकते, धरती पर स्वर्ग ना ला सकते।।
संघर्ष निखारे मानव को, कुन्दन सा उसे बनाता है।
संघर्ष मिले मुक्ति पथ में, सच्चे सुख में ले जाता है।।7।।
ऊँ ह्रीं साधुसमाधि भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सौ तरह के फल है धरती पर, पर मुक्ति फल सबसे अच्छा।
इक बार मनुज को मिल जाये, आतम को सुख देता सच्चा।।
कोई और फलों की आशा न, वह काल अनंत न सुख देगा।
फल चढ़ा मैं मुक्ति फल चाहूँ, तन मन की पीड़ा हर लेगा।।8।।
ऊँ ह्रीं साधुसमाधि भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्योदय से तम दूर होय, पुण्योदय से दुख हट जाता।
वैराग्य भावना भाने से, भोगों से मन भी हट जाता।।
जब पुण्य पाप दोनों तजकर, पूरी शुद्धि की आतम की।
ले अर्घ्य चरण पूजा करता, सुधि आई है परमातम की।।9।।
ऊँ ह्रीं साधुसमाधि भावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

साधु समाधि भावना, है निर्वाण का द्वार।
मृत्यु समाधि जब बने, मिले मोक्ष उपहार।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

चौपाई

मूलगुणों में है अतिचार, पुलक मुनि लें तप का सार।
सु समाधि की भावना भाते, हम चरणों में अर्घ्य चढ़ाते।।1।।
ऊँ ह्रीं पुलाक मुनि साधु समाधि भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
नाही तजी भोजन की ममता, बाकी व्रत में होती समता।
सु समाधि की भावना भाते, हम चरणों में अर्घ्य चढ़ाते।।2।।
ऊँ ह्रीं वकुश मुनि साधु समाधि भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
इक कषाय प्रतिसेवन होय, बाकी व्रत सब पालन होय।
साधु समाधि करते साधना, करते है आतम अराधना।।3।।
ऊँ ह्रीं कुशील मुनि साधु समाधि भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर गुण में कुछ अतिचार, आत्म का करते सोच विचार।
साधु समाधि भावना भाये, साधु चरण में अर्घ्य चढ़ाये।।4।।
ऊँ ह्रीं प्रतिसेवना कुशीलमुनि साधुसमाधि भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

गुण स्थान दशवे में जाये, मोह का उदय वहां भी आये।
वह तो कषाय कुशील कहाय, साधु समाधि भावना भाय।।5।।
ऊँ ह्रीं कषाय कुशीलमुनि साधुसमाधि भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

मोह रहित जो है सुखदाय, यथाख्यात चारित्र बताय।
वह निर्ग्रन्थ साधु मन लाय, साधु समाधि भावना भाये।।6।।
ऊँ ह्रीं निर्ग्रन्थमुनि साधु समाधि भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञानी जो मुनिराज, पहना स्नातक का ताज।
वे तो बस निर्वाण ही जाये, साधु समाधि भावना भाये।।7।।
ऊँ ह्रीं स्नातक मुनि साधु समाधि भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

अंतिम समय में हो प्रभु सुमिरण, तब ही होता है सुमरण।
परमातम बनने का रास्ता, शास्त्रों ने दिया यही वास्ता।।8।।
ऊँ ह्रीं पंच प्रकार मुनि साधु समाधि भावनायै महार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

आधि व्याधि उपाधि का, एक ही समाधान।
आत्म समाधि धार लो, ना है कोई व्यवधान।।

शेरचाल (तर्ज– दे दी हमें आजादी...)

साधु समाधि भावना को, भाव से भाये।
साधु समाधि पूरी हो, ये व्रत भी निभाये।।
साधु समाधि को करें, तज कामना सारी।
साधु समाधि ही करें, ये भावना मेरी।।1।।

हम अपनी समाधि के भाव, ले के आये हैं।
अंतिम समाधि मेरी हो, ये भाव भाये है।।
आधि नहीं व्याधि नहीं, उपाधियां नहीं।
तीनों ही रोग की दवा, समाधि है सही।।2।।
देखो किसी के अंत समय, मंत्र सुनाओ।
गाकर समाधि भावना, शुभ भाव कराओ।।
चारों गति की वंदना, वैराग्य बढ़ाये।
पावन प्रसंग राम का, शुभ भाव बनाये।।3।।
पक्षी हो पशु या मनुज, श्रद्धा हो धारते।
अंतिम समय श्रद्धा बनी, तो स्वर्ग वारते।।
शास्त्रों में बताया, समाधि कैसे होती है।
होगी समाधि जीव की, वो मुक्ति मिलती है।।4।।
कम से कम है तीन भव में मुक्ति जाता है।
अधिक से अधिक सात अठ में, मुक्ति पाता है।।
अंतिम समाधि का ये फल, शास्त्रों में गाया है।
इस राह में हम भी चलें, ये भाव आया है।।5।।

दोहा

जीवन भर करी साधना, बस समाधि की जान।
साधु समाधि हो गई, बारम्बार प्रणाम।।

ऊँ ह्रीं साधु समाधि भावनायै पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

साधु समाधि भक्ति कर, भक्ति से भवनाश।
अंत समय प्रभु नाम हो, होगा सुख अविनाश।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः— ऊँ ह्रीं साधु समाधि भावनायै नमः

वैयावृत्य भावना पूजा

शंभू छंद

पैदल विहार मुनिवर करते, तन में थकान हो जाती है।
तब पाँव दवा और तेल लगा, वैय्यावृत्ति की जाती है।।
भावों से सेवा पुण्यमयी, अपने समान कर लेती है।
मुनिवर की पीड़ा दूर होये, खुद की पीड़ा भी हरती है।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्य भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ॐ ह्रीं वैयावृत्य भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं वैयावृत्य भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

तर्ज– चौबीसी पूजा (जल फल आठों .....)

है जन्म मरण का रोग, दवा समाधि है।
निष्काम कर्म का पाथ, आधि न व्याधि है।।
वैयावृत्ति के भाव, विनय से भर देता।
सेवा से मेवा पाये, पूजा मैं करता।।1।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भोगों के ताप को हम, सुख माना करते।
तप से ना तपाया आत्म, दुख माना करते।।
इसलिये भवों के दुःख, नित्य बढ़ाते है।
चन्दन से पूजूँ नाथ, चरणों आते है।।2।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

हो अमर पुरी के नाथ, मुक्ति में रहते हो।
हो अमर पुरी मम वास, यह तुम कहते है।।
सेवाकर अक्षय कोष, सुख से भरता है।
अक्षत से पूजूँ नाथ, क्षय पद हरता है।।3।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

संयम से भोग हो शांत, संयम न कीना।
भोगों के पीछे भाग, दुःखों को लीना।।

तप त्याग धर्म दशधार, आतम शुद्ध किया।
हो गया काम चकचूर, स्व में रमण किया।।4।।
ऊँ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रसना का रस भटकाये, पाने दौड़ गया।
आतम रस न चख पाये, रस से ठगा गया।।
जीने को भोजन खायें, ऐसे भाव हुये।
नैवेद्य से पूजूँ नाथ, आकर चरण हुये।।5।।
ऊँ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

सूरज चंदा तो रोज, नित्य प्रकाश करें।
हो सम्यग्ज्ञान का ओज, जगमग आत्म करें।।
ज्ञानी खुद दीपक बन, ज्ञान उजाला दे।
दीपक से पूजूं नाथ, ज्ञान की माला दे।।6।।
ऊँ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्यानुबंधी जो पुण्य, धर्म कराता है।
सम्यकदर्शन पथ दे, आत्म मिलाता है।।
ऐसा ही धर्म करूँ, जिससे धर्म बढ़े।
मैं धूप से पूजूँ नाथ, मुक्ति सीढ़ी चढ़े।।7।।
ऊँ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वारथ की दुनिया फल, बिल्कुल ना देगी।
जो पास हमारे तेज, वह भी हर लेगी।।
स्व रथ में बैठ के मैं, मुक्ति जाऊँगा।
फल से मैं पूजूँ नाथ, निज फल पाऊँगा।।8।।
ऊँ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अध्यात्मिक सुख अति शुद्ध, कर्म न आते है।
आतम आनंद पा जायें, शिव पथ पाते है।।
ऐसे ही सुख की चाह, प्रभु मैं ले आया।
अर्घ्यो से पूजूँ नाथ, आत्मिक सुख भाया।।9।।
ऊँ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

दर्शक बन संसार का, राग द्वेष का त्याग।
कर्म बंध न होयगा, खिले आत्म का बाग।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

छत्तीस गुण पालन करें, आचार्य कहलाये।
वैयावृत्ति उनकी कर, शत्–शत् शीश झुकाये।।1।।
ऊँ ह्रीं आचार्य वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
पढ़ते और पढ़ाते है, देते ज्ञान अपार।
वैयावृत्ति उनकी कर, हो जायें भवपार।।2।।
ऊँ ह्रीं उपाध्याय वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
कठिन–कठिन अति तप करें, तप से कर्म सुखाये।
ऐसे तपस्वी की सेवा, बड़े भाग्य से पायें।।3।।
ऊँ ह्रीं तपस्वी जाति मुनि वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
आत्म साधना में लगे, तन सुख हैं दूर।
वैयावृत्ति हम करें, सुख पाऊँ भरपूर।।4।।
ऊँ ह्रीं शैक्ष्य जाति मुनि वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
तन में रोग सतावते, फिर भी समता भाव।
ऐसे मुनि की सेवा करूँ, सुधरे आत्म स्वभाव।।5।।
ऊँ ह्रीं ग्लान जाति वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
वृद्ध मुनिगण साथ में, सबको दे संदेश।
ऐसे मुनि की सेवा से, पावें आतम देश।।6।।
ऊँ ह्रीं गण जाति मुनि वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
दीक्षा देने की विधि, कुल भी देखा जाये।
शुद्ध कुली मुनिराज की, सेवा कर हर्षायें।।7।।
ऊँ ह्रीं कुल जाति मुनि वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
मुनि आर्यिका श्रावक औ, श्राविका संघ में आये।
धर्मात्मा की सेवा कर, मेरा धर्म बढ़ जाये।।8।।
ऊँ ह्रीं चार प्रकार संघ वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

साधु साधु के संग में, धर्म और बढ़ जाये।
धर्मात्मा की सेवाकर, मेरा धर्म बढ़ जाये।।9।।
ऊँ ह्रीं साधु जाति मुनि वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
मन को हरते है मुनि, देते है उपदेश।
मनोज्ञ मुनि की सेवा से, मिले ज्ञान संदेश।।10।।
ऊँ ह्रीं मनोज्ञ जाति मुनि वैयावृत्य भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

दोहा

सेवा से मेवा मिले, सुना है ये संदेश।
जग के सुख तो सहज मिले, मिले मुक्ति का देश।।
ऊँ ह्रीं दश प्रकार मुनि वैयावृत्य भावनाये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

चौपाई

मुक्ति पथ के पथिक महान, पूज्य चरण में करें प्रणाम।
आत्म साधना में रत रहते, ध्यान साधना नदी में बहते।।1।।
मन वैराग्य से भरा हुआ है, जग सुख भाव तो नहीं रहा है।
आकांक्षाये इच्छाये छोड़ी, भोग भाव की रही न जोड़ी।।2।।
महल मसान में भेद न करते, समता धर शुभ भाव में रहते।
दश प्रकार के मुनि बतलाये, उनकी सेवा के भाव बनाये।।3।।
पूर्व जन्म में कृष्ण की सेवा, नारायण पद पाया मेवा।
तीर्थंकर भी सेवा से बनते, सोलह भावों को पूर्ण निभाते।।4।।
घर परिवार में सेवा करना, संस्कार घर से ही लेना।
या समाज में कहीं जरूरत, बन जाओ सेवा की मूरत।।5।।
अंदर होवे सेवा भाव, सर्व जगह ही रहे प्रभाव।
सहयोगी बन लगता मेला, नहीं रहे वह कहीं अकेला।।6।।

संग प्रशंसा भी पाता है, हर कोई के मन भाता है।
जीवन स्वर्ग सा हो जाता है, इक दिन मुक्ति को पाता है।।7।।

दोहा

निःस्वारथ सेवा करो, फल तो स्वयं ही आये।
नेकी कर कुएँ में डाल, वृक्ष में फल लग जायें।।

ऊँ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै पूर्णार्घ्यम् निर्वपमीति स्वाहा।

दोहा

जिस सेवा में स्वार्थ न हो, वैयावृत्ति कहाय।
कल्पवृक्ष समफल मिले, तीर्थंकर पद पाये।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः— ऊँ ह्रीं वैयावृत्य भावनायै नमः

अरहंत भक्ति भावना पूजा

त्रिभंगी छंद

अरहंत की भक्ति, मुक्ति की युक्ति, पथ कल्याण बताती है।
अरिहंत की मुद्रा, तोड़े निद्रा, ध्यान की याद दिलाती है।।
अरहंत कहानी, गुरू जुबानी, सुनने चरण में आया हूँ।
भावों से पूजा, काम ना दूजा, आव्हानन को आया हूँ।।

ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

शंभू छंद

ये जन्म बुढ़ापा मरण देख, पाया इनसे कोई ज्ञान नहीं।
मरने के बाद कोई नहीं मित्र, इस मोह में सच्चा भान नहीं।।
जग मोह में पाप करम करके, आतम पर मैल चढ़ाया है।
आतम को स्वच्छ कराने अब, अरिहंत भक्ति मन लाया है।।1।।

ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ये विषय भोग इक दिन छूटें, यदि स्वयं छोड़े तो ज्ञानी बने।
विषयों की चाह में जलते हैं, यदि इन्हे छोड़े तो शांत बने।।
तृष्णा संतोष के जल से ही, हो शांत आत्म सुख देती है।
चंदन सी शीतलता पाने, अरहंत भक्ति ही होती है।।

ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षण–क्षण में आयु क्षय होती, औ श्वांस भी कम हो जाती है।
शाश्वत आतम को ना जाना, अक्षय आतम सुख मोती है।।
उज्जवल निर्मल आतम पाऊँ, अक्षत से पूजा करते है।
अक्षयपुर वासी नाथ प्रभो, सुख झरने चरणों झरते है।।3।।

ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

भोगों में भूला आतम को, इन्द्रिय सुख जग में भरमाते।
अरिहंत दर्श से आँख खुली, सर्वज्ञ ज्ञान पाने आते।।
शुभ ज्ञान का सौरभ मिला यहाँ, जिसने जग को ही भुला दिया।
अरिहंत भक्ति ने वही दिया, अब तक जग ने जो नहीं दिया।।4।।

ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अरिहंत चरण अमृत बरसे, हम मोह का छाता लगा रहे।
अमृत सा तीर्थ मिला मुझको, पर मोह नदी में नित्य बहे।।
मोही तो रस के स्वाद लेय, खुश हो कर्मों में झूम रहा।
अरिहंत प्रभु ने मोह तजा, नैवेद्य से चरणा पूज रहा।।5।।

ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु केवलज्ञान का दीप ऐसा, तूफान में भी न बुझता है।
है केवलज्ञान सूर्य ऐसा, वह तो न कभी भी ढलता है।।
तुम ज्ञान दीप की ज्योति से, निज दीप जलाना चाहूँ मैं।
अरिहंत को दीप से पूज रहा, भक्ति की भावना भाऊँ मै।।6।।

ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

नर देव पशु मानुष भव में, कर्मों की गठरी ढोता है।
उसका ही फल चिंता पाया, प्रभुवर को देखके समझा हूँ।।

इस जग का कर्त्ता धर्त्ता नहीं, सहयोगी हूँ और कारण हूँ।
यदि ऐसा भाव जो हो जावे, पूजा ही दुःख निवारण हो।।7।।
ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ धर्म क्षेत्र बुरे भावों से, हमने कुरूक्षेत्र बना डाला।
बढ़ती कषाय की ज्वाला ने, शांति को क्लेशमय कर डाला।।
निज आत्म धर्म का सार सुनो, शांति फल से ही धर्म मिले।
अरिहंत की शांति मुद्रा लख, अंतर में शांति के फूल खिले।।8।।
ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

है धर्म का फल मुक्ति जग में, पर धर्म से जग के सुख मागूँ।
जो धर्म मोक्ष दे सकता है, उससे मैं स्वर्ग के सुख चाहूँ।।
छोटी बुद्धि छोटा है ज्ञान, हमें मांगना भी न आता है।
अरिहंत भक्ति से कुछ सीखूँ, पाऊँ तुम सम ही साता है।।9।।
ऊँ ह्रीं अरहंत भक्ति भावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

अरि हन कर अरिहंत बने, शत्रु कर्म नशाय।
अरिहन्त भक्ति हम करें, शत्–शत् शीश झुकाये।।
।।परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

पद्धरि छंद(ये देश है वीर ....)

इस वृक्ष अशोक का भाग्य बड़ा, प्रभु के समीप ही आन खड़ा।
अरिहंत भक्ति सुखकारी है, अरिहंत भक्ति दुखहारी है।।1।।
ऊँ ह्रीं अशोकवृक्ष प्रातिहार्य सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभ से होती है पुष्प वृष्टि, हर्षित होती है सारी सृष्टि।
अरिहंत भक्ति में सुमन झरे, ये पुष्प भी प्रभु की भक्ति करें।।2।।
ऊँ ह्रीं पुष्पवृष्टि प्रातिहार्य सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्वों का सार जो समझाया, सब दिव्य ध्वनि में है पाया।
अब तक पढ़ते है वह वाणी, कहलाती है वह जिनवाणी।।3।।

ऊँ ह्रीं दिव्यध्वनि प्रातिहार्य सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आ इन्द्र भी चँवर ढुराय रहे, सेवा का अवसर पाय रहे।
सेवा मुझको प्रभु करना है, अरिहंत भक्ति भी वरना है।।4।।

ऊँ ह्रीं चँवर प्रातिहार्य सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णिम सिंहासन प्यारा है, उस पर प्रभु रूप भी न्यारा है।
अरिहंत भक्ति सुर करते है, हम भी करने को आते है।।5।।

ऊँ ह्रीं सिंहासन प्रातिहार्य सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर दुंदुभि बाजा बजा रहे, भक्तों को पास में बुला रहे।
अरिहंत भक्ति करवाने को, पापों को शीघ्र नशाने को।।6।।

ऊँ ह्रीं दुंदभि प्रातिहार्य सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिछत्र ने सिर पर छाया की, भक्तों का मन हर्षाया भी।
अरिहंत भक्ति को करना है, कर्मों का रेला हरना है।।7।।

ऊँ ह्रीं त्रिछत्र प्रातिहार्य सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम ज्ञानावरण नशाया है, औ नंत ज्ञान को पाया है।
अरिहंत भक्ति से ज्ञान मिले, औ ज्ञान से आतम कमल खिले।।8।।

ऊँ ह्रीं अनन्त ज्ञान सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम दर्शनावरण नशाया है, त्रिलोक दर्श को पाया है।
आतम दर्शन भी करते हो, अरिहंत भक्त सुख भरते हो।।9।।

ऊँ ह्रीं अनन्त दर्शन सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ से ही मोह का नाश किया, तब अनंत सुखों को पाय लिया।
अरिहंत भक्ति है सुखकारी, अरिहंत भक्ति संकटहारी।।10।।

ऊँ ह्रीं अनन्त सुख सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अंतराय दुखदाई है, नाशा तो शक्ति आई है।
अरिहंत भक्ति से शक्ति मिले, अरिहंत भक्ति से बाधा टले।।11।।
ऊँ ह्रीं अनन्त बल सहित अरहन्त भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

महार्घ्य

गीता छंद (तर्ज–प्रभु पतित पावन....)

अरिहंत प्रभु की शरण में, आ बैर व्याधि मिटती है।
तन स्वस्थ हो मन स्वस्थ हो, बाधा कहीं न टिकती है।।
प्रभुवाणी सुनकर आत्मा में, परम शांति आती है।
महिमा प्रभु की गाये हम, अरिहंत भक्ति भाती है।।
ऊँ ह्रीं अरहन्त भक्ति भावनायै महार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

गगन धरा निर्मल हुई, निर्मल हुये हैं भाव।
अरिहंत भक्ति से मिले, निज आतम का गाँव।।

शेरचाल

अरिहंत भक्ति करने सारी, सृष्टि है तैयार।
कंटक रहित भूमि हुई, है पवन का बिहार।।
रत्नों के छवि जगमगा के, आरती करें।
औ कल्पवृक्ष के सुमन, गगन से झरें।।1।।
छह ऋतु के फल फूल, भक्ति करने आ गये।
काटों रहित हुये हैं फूल, मुस्कुरा गये।।
भूतल औ गंगन संग, उनके गीत गाती है।
कोयल भी कूके कहु कहु, गुन गुनाती है।।2।।
स्वर्गों के इन्द्र आके, चरण वन्दना करें।
औ शेर गाय एक घाट, पानी को पियें।।2।।
मानुष चरण में आके, सौख्य पाते है घना।
सारे ही दुःख दूर हुये, काम सब बना।।3।।

राग रहित द्वेष रहित, वीतरागी है।
मोह माया लोभ के वे, पूर्ण त्यागी है।।
इस त्याग का प्रभाव, तो कण–कण में झलकता।
है धर्म अहिंसा प्रभाव, हर ओर बिखरता।।4।।

निज पर जो विजय पाई, सभी शरण आ गये।
कर्मों को नाश के प्रभु, भगवान बन गये।।
अरिहंत भक्ति करने, हम भी शरण आये है।
महिमा बखान करके, "स्वस्ति" सर झुकाये।।5।।

दोहा

विविध तरह से भक्ति की, लक्ष्य तो है बस एक।
निर्मल भाव की भावना, यही भाव बस नेक।।

ऊँ ह्रीं अरहन्त भक्ति भावनायै पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा

दोहा

निर्ग्रन्थों का पंथ तो, कठिन है पर सुखदाय।
हमें चलने की शक्ति दो, शत्–शत् शीश झुकाये।।
अरिहंत भक्ति से मिले, निश्चित मोक्ष का मार्ग।
इसीलिये करते रहें, जाग रे चेतन जाग।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं अरहन्त भक्ति भावनायै नमः

आचार्य भक्ति भावना पूजा

भुजंग प्रयात (नरेन्द्र फणीन्द्र.....)

करें साधना चलते, मुक्ति के पथ पर।
शिष्यों को संग ले, चले है डगर पर।।
आचार्य गुरूवर की, पूजा को आये।
हमें संग ले लो, चरण सिर झुकाये।।

ऊँ ह्रीं आचार्य भक्ति भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं आचार्य भक्ति भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं आचार्य भक्ति भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

भुजंग प्रयात

आतम पे पापों का, मैल चढ़ाते।
नहीं धर्म करते, न वैराग्य लाते।।
वैराग्य पथ के पथिक हैं, ये गुरूवर।
चलते स्वयं और, शिष्यों को तरूवर।।1।।

ॐ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

विषयों के त्यागी, धर्म धार लीना।
भोगों का तज करके, शुद्धात्म कीना।।
मुक्ति में जाने को, करते तपस्या।
चंदन से पूजूँ, मिटेगी समस्या।।2।।

ॐ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय निधि होती, आतम के अन्दर।
उसको ही पाने, तप करते निरंतर।।
हर आत्म परमात्म, जैसे है होता।
अक्षत से पूजूँ, बनूँ आप जैसा।।3।।

ॐ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

फूलों की खुशबू, ज्यों मन को लुभायें।
जगत भोग इन्द्रिय को, खुद ही बुलाये।।
सदा भोग भोगा, न संयम लिया है।
आचार्य गुरू की अब शरणा लिया है।।4।।

ॐ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उपवास रस त्याग, आहार लेते।
प्रियवाणी में सबको, उपदेश देते।।
हितकारी आचार्य, हमको मिले है।
पूजूँ चरण मैं, हृदय तो खिले है।।5।।

ॐ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

ज्यों दीप बाहर के तम को मिटाये।
आचार्य गुरू हमको, ज्ञानी बनाये।।
आलस को छोड़ों, चलो दीक्षा ले लो।
दीप से पूजूँ, अंधेरा भगा लो।।6।।

ऊँ ह्रीं आचार्यभक्ति भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

डरो ना किसी से, पर कर्मों से डरना।
किया इंतजाम पर, आये कोरोना।।
करम से तो बचना, मुश्किल है भारी।
धूप से पूजूँ भक्ति की तैयारी।।7।।

ऊँ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार फल को, सदा चाहता है।
करम फल, धरम फल नहीं मानता है।।
आचार्य गुरूवर, फल को बताते।
सत्पथ दिखा करके, पथ पे चलाते।।8।।

ऊँ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

धरम वीतरागी, है राग छुड़ाये।
तभी आत्म पथ पर, है चलना सिखाये।।
आचार्य गुरू, वीतराग सिखाते।
भक्ति से चरणों में, अर्घ्य चढ़ाते।।9।।

ऊँ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

आचार्य भक्ति करूँ, संयम पथ के हेत।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिले मुक्ति का खेत।।
।।परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

चाल छंद(तर्ज–ऐ मेरे वतन के ....)

द्वादश तप है बाह्यांतर शुद्ध होता तपसी का अंतर।
आचार्य ने तप को धारा, आतम का रूप निखारा।।1।।

ऊँ ह्रीं द्वादश तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला तेला और मास, करते हैं गुरू उपवास।
कर्मों को नित्य झराते, आतम को हैं चमकाते।।2।।

ऊँ ह्रीं अनशन तप आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कभी भूख से कम ही खावे, ऊनोदर व्रत कहलावे।
आचार्य की महिमा न्यारी, इनकी भक्ति सुखकारी।।3।।

ऊँ ह्रीं अवमौदर्य तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्रत धर आहार को जाते, पूरा हो आहार पाते।
आचार्य की महिमा न्यारी, इनकी भक्ति सुखकारी।।4।।

ऊँ ह्रीं व्रतपरिसंख्यान तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिदिन करते रस त्यागा, क्योंकि आतम है जागा।
आचार्य की महिमा न्यार, इनकी भक्ति सुखकारी।।5।।

ऊँ ह्रीं रस परित्याग तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन की सिद्धि कीनी, स्थिरता में ध्यान में लीनी।
आचार्य की महिमा न्यारी, इनकी भक्ति सुखकारी।।6।।

ऊँ ह्रीं विविक्त शय्यासन तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लेते है खुद की परीक्षा, धर काय क्लेश की इच्छा।
आचार्य की महिमा न्यारी, इनकी भक्ति सुखकारी।।7।।

ऊँ ह्रीं कायक्लेशतप सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर बाह्व तपों में समता, इससे बढ़ती है क्षमता।
आचार्य की भक्ति न्यारी, इनकी भक्ति सुखकारी।।8।।

ऊँ ह्रीं बाह्वषट् तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्रत में जो दोष लगे हैं, प्रायश्चित्त का भाव धरे वे।
आचार्य की पूज रचाऊँ, चरणों में शीश झुकाऊँ।।9।।

ऊँ ह्रीं प्रायश्चिततप सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वे विनय महागुण धारी, अभिमान की शक्ति घरी।
आचार्य की पूज रचाऊँ, चरणों में शीश झुकाऊँ।।10।।
ॐ ह्रीं विनय तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सेवा की जहाँ जरूरत, वैयावृत्ति की मूरत।
आचार्य की पूज रचाऊँ, चरणों में शीश झुकाऊँ।।11।।
ॐ ह्रीं वैयावृत्यतप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
स्वाध्याय में आगे बढ़ते, आतम अध्याय को पढ़ते।
आचार्य की पूज रचाऊँ, चरणों में शीश झुकाऊँ।।12।।
ॐ ह्रीं स्वाध्यायतप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
काया से ममता त्यागी, आतम के हैं अनुरागी।
आचार्य की पूज रचाऊँ, चरणों में शीश झुकाऊँ।।13।।
ॐ ह्रीं व्युत्सर्ग तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
तत्वों का ध्यान किया है, आतम को जान लिया है।
आचार्य की पूज रचाऊँ, चरणों में शीश झुकाऊँ।।14।।
ॐ ह्रीं ध्यान तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

अंतर मन को शुद्ध कर, करते कर्म का नाश।
आचार्य गुरू के चरण, होवे धर्म प्रकाश।।15।।
ॐ ह्रीं द्वादश तप सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
उर क्षमा भाव है आया, सब जीव से क्षमा कराया।
है उत्तम क्षमा के धारी, क्रोधी की शक्ति हारी।।16।।
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्म सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
आतम को किया मुलायम, और भाव हो गये हैं नम।
माद्रव धर मान घटाये, औ सहज भाव अपनाये।।17।।
ॐ ह्रीं उत्तम मार्द्रव धर्म सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
छोड़ी माया की छाया, औ सरल भाव उर आया।
आर्जव धर माया घटाये, चरणों में अर्घ्य चढ़ाये।।18।।
ॐ ह्रीं उत्तम आर्जव धर्म सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वे सत्य धर्म को पाने, जिनवर की बात को माने।
वे सत्य का दर्श करायें, चरणों में शीश झुकायें।।19।।

ऊँ ह्रीं उत्तम सत्य धर्म सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वे शौच भाव अपनाते, आतम को शुचि बनाते।
कर शौच धर्म का पालन, कर्मों का करते गालन।।20।।

ऊँ ह्रीं उत्तम शौच धर्म सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संयम इन्द्रिय पर करते, भोगों के भाव को हरते।
आचार्य परम उपकारी, भक्तों को हैं हितकारी।।21।।

ऊँ ह्रीं उत्तम संयम धर्म सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप की गर्मी जो आई, कर्मों की करी सफाई।
तप ने तन को चमकाया, आचार्य शरण में आया।।22।।

ऊँ ह्रीं उत्तम तप धर्म सहित आचार्य भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब राग का त्याग किया है, सब कुछ ही छूट गया।
वे उत्तम त्याग के धारी, भक्तों के है उपकारी।।23।।

ऊँ ह्रीं उत्तम त्यागधर्म सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

किंचित भी शेष रहा न, आकिंचन भाव वहाँ है।
उत्तम आकिंचन पाया, चरणों में अर्घ्य चढ़ाया।।24।।

ऊँ ह्रीं उत्तम आकिचन्य धर्म सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित आत्म ब्रम्ह की शक्ति, पहचानी आतम युक्ति।
वे ब्रम्हचर्य के धारी, रक्षा गुरू करें हमारी।।25।।

ऊँ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश धर्म की पहन के माला, खोले मुक्ति का ताला।
जो धर्म को है अपनाये, उसे भव से पार कराय।।26।।

ऊँ ह्रीं उत्तम दशधर्म सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समता धर ध्यान में बैठें, सामायिक करने पहुँचे।
आवश्यक कभी न छोड़ें, जिन देव से नाता जोड़े।।27।।

ऊँ ह्रीं सामायिक आवश्यक सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के गुण गाते, स्तुति करके हर्षाते।
आवश्यक कभी न छोड़े, जिनदेव से नाता जोड़े।।28।।

ऊँ ह्रीं स्तुति आवश्यक सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरहंत सिद्ध को वन्दन, जीवन करते है चन्दन।
हम करें वन्दना तेरी, मिट जायें कर्म की फेरी।।29।।

ऊँ ह्रीं वन्दना आवश्यक सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपने दोषों को हरने, लगे प्रतिक्रमण को करने।
आचार्य की भक्ति करता, चरणों में मस्तक धरता।।30।।

ऊँ ह्रीं प्रतिक्रमण आवश्यक सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पापों का त्याग किया है, औ प्रत्याख्यान लिया है।
गुरू आतम शुद्ध है तेरी, काटे कर्मों की फेरी।।31।।

ऊँ ह्रीं प्रत्याख्यान आवश्यक सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन मोह का त्याग किया है, कायोत्सर्ग आत्म लिया है।
गुरूवर की छाया पाई, कर्मों की फौज भगाई।।32।।

ऊँ ह्रीं कायोत्सर्ग आवश्यक सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् आवश्यक को धरकर, मुक्ति पथ आगे बढ़कर।
अवलंबन भक्त को देते, उसको भी पार लगाते।।33।।

ऊँ ह्रीं षट् आवश्यक सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

मन स्थिरता के लिए, मन से धर्म कराय।
मन गुप्ति को धारते, शत्–शत् शीश झुकाये।।34।।

ऊँ ह्रीं मनोगुप्ति सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचन बाण को वश किया, वचन को करते मौन।
वचन गुप्ति को पालते, प्रिय वचनों को बोल।।35।।

ऊँ ह्रीं वचन गुप्ति सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्य व्यर्थ के ना करें, काया वश में होय।
काय गुप्ति को पालते, कर्म गिरी को खोय।।36।।

ऊँ ह्रीं कायगुप्ति सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन गुप्ति से गुप्त है, मन वच शुद्ध बनाय।
काया की शुद्धि करी, शत्–शत् शीश झुकाय।।37।।

ऊँ ह्रीं तीनगुप्ति सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्वों पर श्रद्धान कर, पाले ज्ञानाचार।
श्री आचार्य की भक्ति में, बहे ज्ञान की धार।।38।।

ऊँ ह्रीं ज्ञानाचार सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध दृष्टि आतम लखी, पाले दर्शनाचार।
आचार्य भक्ति करूँ, सम्यग्दर्शन सार।।39।।

ऊँ ह्रीं दर्शनाचार सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम शुद्धि के लिये, धरें चरित्राचार।
आचार्य की भक्ति कर, बहें व्रतों की धार।।40।।

ऊँ ह्रीं चरित्राचार सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप से वे डरते नहीं, शक्ति और बढ़ जाये।
बने तपस्वी और वे, धर्म के है आधार।।41।।

ऊँ ह्रीं तपाचार सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शक्ति छिपा ना तप करें, शक्ति और बढ़ जाये।
वीर्याचार के धारी को, शत्–शत् शीश झुकाये।।42।।

ऊँ ह्रीं वीर्याचार सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

गीता छंद (तर्ज–प्रभु पतित पावन.....)

दश धर्म बारह तप को धर, आचार्य मुक्ति पथ बढ़े।
गुप्ति से मन वच गुप्त कर, वो मुक्ति की सीढ़ी चढ़े।।

शिष्यों के गुरू आचार्य भगवन, शिष्यों को संग में धरे।
आचार्य श्री के चरण में, हम अर्घ्य से पूजा करें।।
ऊँ ह्रीं छत्तीसगुण सहित आचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

ज्ञान ध्यान तप में निरत, धर्म की करें बहार।
जयमाला वर्णन करें, आचार्य गुण सार।।

चौपाई

सोलहकारण भावना भाये, आचार्य भक्ति सुखदाय।
परमेष्ठी तीजे सुखकार, महिमा इनकी है मनहार।।1।।
सोलहकारण भावना भाये, आचार्य भक्ति सुखदाय।
परमेष्ठी तीजे सुखकार, महिमा इन की है मनहार।।2।।
सिद्ध प्रभु की स्तुति करते, क्रोध कषायों को हैं हरते।
बारह तप से तनु चमकता, दश धर्मों से आत्म दमकता।।3।।
षट् आवश्यक अवश्य पाले, दुष्ट कर्म के टूटे जाले।
गुप्ति से किया आत्म सुरक्षित, शिष्य संग में हुये सुरक्षित।।4।।
पालन करते पंचाचार, शिष्यों को भी दें आधार।
मूलगुण अट्ठाईस पाले, तोड़े दुष्ट कर्म के ताले।।5।।
समय व्यर्थ ना कभी गँवाते, करते धरम औ संग करवाते।
आर्त औ रौद्र ध्यान है छोड़ा, धर्म ध्यान से नाता जोड़ा।।6।।
शिक्षा दीक्षा प्रायश्चित्त देते, संस्कार शिष्यों को देते।
सागर के सम है गंभीर, गुरू रक्षा कर देते धीर।।7।।
शिव पथ के हैं गुरूवर नायक, मोक्ष मार्ग उपदेश के दायक।
अर्चना वन्दन भक्ति गाऊँ, पूजा करके शीश झुकाऊँ।।8।।

दोहा

हित मित औ प्रिय वाणी से, शास्त्र के खोलें राज।
परम प्रभावक गुरूवर हैं, कहते हैं महाराज।।
ऊँ ह्रीं आचार्यभक्ति भावनायै पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

कामदेव को तज दिया, ब्रम्हचर्य का तेज।
ब्रम्ह शक्ति से ध्यान कर, पायें मुक्ति सेज।।
।।परिपुष्पाजंलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै नमः

बहुश्रुत भक्ति भावना पूजा

शंभू छंद

गंभीर दिव्य वाणी प्रभु की, भटके को राह दिखाती है।
जिन कानों में वह पड़ जाती, उस ह्रदय का कमल खिलाती है।।
बहुश्रुत की भक्ति करने का, मन में अब भाव उमड़ आया।
यह पुण्यवान को मिलती है, मिले पुण्यवान को जिन छाया।।

ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

हम काल अनादि से जग में, बिन आत्म ज्ञान के घूम रहे।
पर में उलझे औ क्लेश किया, भारी से भारी कष्ट सहे।।
बहुश्रुत सागर से बूंद मिले, यह आश लेके चरणों आया।
प्रभु वाणी को जल से पूजूँ, मिल जाये दिव्य ध्वनि छाया।।1।।

ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजे को अपना मान–मान, भ्रम जाल में जीवन जीता हूँ।
ना जाना आतम को अब तक, अघ जहर के प्याले पीता हूँ।।
बहुश्रुत सिन्धु में डुबकी लगा, शीतलता मुझको पाना है।
चन्दन से पूजूँ जिनवाणी, निज ध्यान शरण में आना है।।2।।

ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

कभी वृक्षों पर कभी बिल में भी, न जाने कितने घर बदले।
निज घर मुक्ति का पता नहीं, निज घर की खोज में अब निकले।।

बहुश्रुत जिनवर की वाणी से, निज घर के पता को पाना है।
अक्षयपुर में जा वास करूँ, अक्षत भक्ति से चढ़ाना है।।3।।
ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा
कभी इस तन ने कभी कर्णों ने, कभी चक्षु ने अपना रस मांगा।
इनकी पूर्ति में लगा रहा, कभी आत्म ज्ञान में ना जागा।।
बहुश्रुत की भक्ति का फल चाहूँ, इन्द्रिय सुख से मन हट जाये।
पुष्पों से पूजा करते हैं, बस आत्म शरण मुझे मिल जाये।।4।।
ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
जिव्हा इन्द्रिय बलवान बहुत, सुख पाने को भटकाती है।
पश्चात् रोग बीमारी दें, निज धर्म में फिर अटकाती है।।
बहुश्रुत का स्वाद आत्म पाये, इसीलिये भक्ति से पूज रहा।
नैवेद्य चढ़ाकर गीत गाये, भक्ति के सुर में गूंज रहा।।5।।
ऊँ ह्रीं बहुतश्रुत भक्ति भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
जो ज्ञान दीप को जगा लेता, उसे ये जग अच्छा न लगता है।
ज्ञानी–ज्ञानी का संग ढूँढ़, बस आर्त रौद्र से बचता है।।
कुज्ञान कुध्यान कराते है, इससे बहुश्रुत की भक्ति करो।
दीपक से पूजा करते है, अज्ञान तिमिर को आप हरो।।6।।
ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
जीवन का सार है सुख शांति, वह सच्चे ज्ञान से आयेगी।
वह ज्ञान पाने मेहनत कर लो, शक्ति तो खर्च हो जायेगी।।
बहुश्रुत से सच्चा ज्ञान मिले, भक्ति कर ज्ञान अतुल कर लो।
ले धूप भाव से पूज करूँ, अज्ञान कर्म अपना हर लो।।7।।
ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
फल पाने जग में दौड़ रहें, उस फल ने निष्फल कर दीना।
मुक्ति फल को है अब जाना, इससे बहुश्रुत में चित्त दीना।।
बहुश्रुत की भक्ति बहुश्रुत दें, बहुश्रुत का फल बहुश्रुत ही है।
बहुश्रुत को फल से पूजे हम, बहुश्रुत पा ले तो मुक्ति है।।8।।
ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हमें ज्ञान तो सारा है लेकिन, पर मोह के कारण न जाना।
जाना तो है पर ना माना, इससे होवे आना जाना।।
बहुश्रुत की भक्ति भव फेरी, तज सुख में पहुँचा देती है।
मैं अर्घ्य से पूजूँ बहुश्रुत को, मन की अशांति हर लेती है।।9।।
ऊँ ह्रीं बहुश्रुतभक्ति भावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

ग्यारह अंग औ पूर्व चतुंर्दश, ज्ञान बतलाया है इनमें वश।
है विशाल तो इसकी महिमा, गणधर ने गाई है गरिमा।।1।।
ऊँ ह्रीं ग्यारहअंग चौदहपूर्वगुणधारक बहुश्रुतभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
कैसे चलना कैसे मिलना, कैसे बोल के बातें करना।
जीवों का आचरण सुधारे, आचारांग जीव को तारे।।2।।
ऊँ ह्रीं आचारांग सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अध्ययन विनय औ क्रिया धर्म की, विधि होती है भाव नर्म की।
सूत्र कृतांग में वर्णन गाया, भाव से हमने अर्घ्य चढ़ाया।।3।।
ऊँ ह्रीं सूत्रकृतांग सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सब द्रव्यों के अनेक स्थान, वर्णन सत्य करे ये मान।
स्थानांग ने हमें बताया, भाव से हमने अर्घ्य चढ़ाया।।4।।
ऊँ ह्रीं स्थानांग सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
द्रव्य क्षेत्र अरू काल को समकर, भाव सहित है वर्णन कर कर।
समवायांग नाम को पाया, भाव से हमनें अर्घ्य चढ़ाया।।5।।
ऊँ ह्रीं समवायांग सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
स्याद्वाद की व्याख्या करता, जीव की सुन्दर व्याख्या करता।
व्याख्या प्रज्ञप्ति ज्ञान कराये, हम जिनवाणी को अर्घ्य चढ़ायें।।6।।
ऊँ ह्रीं व्याख्याप्रज्ञप्ति बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
महापुरूष आदि तीर्थंकर, वैभव गुण को ही बतलाकर।
ज्ञातृ कथांग नाम है जाना, बहुश्रुत का अभ्यास कराना।।7।।
ऊँ ह्रीं ज्ञातृकथांग बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
श्रावक का आचार हो कैसा, उपासकाध्ययन बतलाये वैसा।
श्रावक बन उद्धार कीजिये, जिनवाणी को अर्घ्य दीजिये।।8।।
ऊँ ह्रीं उपासकध्ययनाग बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक तीर्थंकर काल में दश मुनि, सह उपसर्ग पाये मुक्ति मुनि।
अंतःकृदश वर्णन गाये, हम चरणों में अर्घ्य चढ़ाये।।9।।
ऊँ ह्रीं अंतःकृत दशांग बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
घोर उपसर्ग सह स्वर्ग में जायें, जिनवाणी भी गीत को गाये।
अनुत्तरोपपादिक दशांग है, जिनवाणी का ये भी अंग है।।10।।
ऊँ ह्रीं अनुत्तोपपादिक दशांगसहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
साठ हजार प्रश्न के उत्तर, वीर वाणी में पाये गणधर।
प्रश्न व्याकरण अंग बताया, हमनें भाव से अर्घ्य चढ़ाया।।11।।
ऊँ ह्रीं प्रश्न व्याकरणांग बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
कर्म का फल प्रभुजी बतलावे, सुनकर भक्त भी दीक्षा लेवें।
विपाक सूत्र शुभ अंग बताया, हमनें भाव से अर्घ्य चढ़ाया।।12।।
ऊँ ह्रीं विपाक सूत्रांग सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

ग्यारह अंग को भाव से, नमन करूँ शतबार।
जिनवाणी का ज्ञान कर, उतरें भव से पार।।13।।
ऊँ ह्रीं ग्यारह अंग सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

व्यय उत्पाद ध्रौव्य का वर्णन, द्रव्य के ही ये है शुभ लक्षण।
उत्पाद पूर्व के नाम को गाया, जिनवाणी को शीश झुकाया।।14।।
ऊँ ह्रीं उत्पाद पूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
तत्व पदार्थ द्रव्य की व्याख्या, सुनय दुनय से होती व्याख्या।
अग्रायणी का ज्ञान ग्रहण कर, द्रव्य तत्व भावों में भर कर।।15।।
ऊँ ह्रीं अग्रायणी पूर्वसहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
तप गुण द्रव्य आतम की शक्ति, बतलाकर की है अभिव्यक्ति।
सुन्दर व्याख्या वीर्यानुवाद से, सुख मिलता है ज्ञान स्वाद में।।16।।
ऊँ ह्रीं वीर्यानुवादपूर्वसहित बहुश्रुतभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्णन सप्त भंग का करता, झगड़ा क्लेश है इससे मिटता।
अस्ति नास्ति से बात को मानो, इस संसार का सच पहचानों।।17।।
ऊँ ह्रीं अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ भेदमय ज्ञान बताया, ज्ञान से ज्ञान की खोज कराया।
ज्ञान प्रवाद से बढ़ता ज्ञान है, ज्ञान के ज्ञान से मिटे अज्ञान है।।18।।
ऊँ ह्रीं सत्यप्रवादपूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दस प्रकार का सत्य है होता, इसका न हमको होता।
सत्य भेद से धर्म को जानो, वीरा की वाणी को मानो।।19।।
ऊँ ह्रीं सत्यप्रवादपूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मा का उपयोग है कैसा, आत्म प्रवाद बताये वैसा।
आत्मा का यदि ध्यान लगाये, आतम परमातम बन जाये।।20।।
ऊँ ह्रीं आत्मप्रवादपूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म उदय हो बंध हो कैसे, कर्म प्रकृतियाँ बताई वैसे।
कर्म की व्याख्या कर्म प्रवाद, कर्म तजो हो आतम स्वाद।।21।।
ऊँ ह्रीं कर्मप्रवादपूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्याग धर्म की सबसे सच्चा, आतम को जो बनाये अच्छा।
प्रत्याख्यान पूर्व बतलाये, हमने भाव से अर्घ्यं चढ़ाये।।22।।
ऊँ ह्रीं प्रत्याख्यान पूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्या महाविद्याायें होती, इनसे मिलती ज्ञान की ज्योति।
विद्यानुवाद ने ज्ञान कराया, हमनें भाव से अर्घ्य चढ़ाये।।23।।
ऊँ ह्रीं विद्यानुवाद पूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के पंचकल्याणक, भक्त के होते पाप निवारक।
है कल्याणवाद लघुनायक, पुण्यमयी है पुण्य के दायक।।24।।
ऊँ ह्रीं कल्याणवाद पूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणों की रक्षा कैसे करते, शास्त्र चिकित्सा है बतलाते।
प्राणवाद से निश्चित जानों, प्राण धार प्रभु बात को मानो।।25।।

ऊँ ह्रीं प्राणानुवादपूर्व सहितबहुश्रुतभक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व संगीत औ छन्द अंलकार, कविता लेखन के ही संस्कार।
क्रिया विशाल है सबको सिखाये, भावों से हम शीश झुकाये।।26।।

ऊँ ह्रीं क्रियाविशाल पूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

उर्ध्व मध्य अधोलोक का वर्णन, स्वर्ग नरक का करता वर्णन।
है त्रिलोक बिन्दु का सार, मोक्ष देख कर लो उद्धार।।27।।

ऊँ ह्रीं त्रिलोक बिन्दु पूर्व सहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

दोहा

चौदह पूर्व में वीर ने, दिया ज्ञान का सार।
स्वाध्याय करके करो, जीवन का उद्धार।।

ऊँ ह्रीं ग्यारहअंग चौदह पूर्वसहित बहुश्रुत भक्ति भावनायै महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

जिनवाणी का ज्ञान तो, सिन्धु सम है अपार।
कर ले जो इस ज्ञान को, होवे भव से पार।।

शेरचाल

बहुश्रुत तो देवे जीव को है, ज्ञान का भंडार।
बहुश्रुत में भरा तीन लोक, ज्ञान है अपार।।
बहुश्रुत की भाव वन्दना, हम नित्य ही करें।
बहुश्रुत से ही संसार निकले, मोक्ष को वरे।।1।।

वीरा प्रभु ने करूणा करके, दिया हमें ज्ञान।
गणधर ने उसे लेके, समझाया वही ज्ञान।।
स्वर्ग और मोक्ष का, रास्ता दिखाती है।
पापों से हटा, पुण्य भाव में लगाती है।।2।।
आज हम जो धर्म करें, जिनवाणी का उपकार।
गुरूओं से जो मिले, जिनवाणी का उपहार।।
बिन ज्ञान के संसार तो, दुःखों से भरा है।
होवे जो आत्म ज्ञान तो, ये जग भी हरा है।।3।।
कर्मों से छूटने की राह, हमें बताये।
औ धर्म क्रिया कैसे करें, समझ में आये।।
सौ बार नमन मैं, करूँ जिनवाणी माता को।
देती हो सच्ची शांति, औ देती साता को।।4।।

दोहा

जिनवाणी के ज्ञान से, मन होता है शांत।
हो आतम कल्याण भी, जीवन हो प्रशांत।
ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै पूणार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

बहुश्रुत भक्ति नित करूँ, करूँविनय कर जोड़।
ज्ञान का हमें वरदान दो, जग से मन को मोड़।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै नमः

षट् आवश्यक भावना पूजा

शंभू छंद (तर्ज–भला किसी का......)

समता वन्दना और प्रतिक्रमण, स्तुति प्रतिदिन करते।
कायोत्सर्ग करें औ प्रत्याख्यान, वे नहीं कभी भी छोड़ते है।।
आवश्यक करने में गुरूवर, आलस्य जरा न करते है।
उस आवश्यक को पूज रहें, पल–पल जो कर्म हरते है।।

ऊँ ह्रीं षट् आवश्यक भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं षट् आवश्यक भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं षट् आवश्यक भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

तर्ज– चौबीस पूजा (जल फल आठों...)

आरंभ हिंसा के काम, झट पट करते हैं।
पर धर्म के है जो कार्य, आलस करते हैं।।
आवश्यक अवश्य करो, कुछ तो होगा ही।
जल से पूजूँ मैं नाथ, भव तो नाशूं भी।।1।।

ऊँ ह्रीं षट् आवश्यक भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मोही तो सबको बुला, झगड़ा करवाता।
पर छोड़ न पाऊँ नाथ, चरणों में आता।।
आवश्यक पालन हेत, शक्ति मुझको दो।
चन्दन से पूजूँ नाथ, मन में भक्ति दो।।2।।

ऊँ ह्रीं षट् आवश्यक भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अखंड है आत्म, कर्म ने खंडित की।
शाश्वत पद पूजूँ नाथ, धर्म से मंडित की।।
आवश्यक पालन हेत, मुझको शक्ति दो।
अक्षत से पूजूँ नाथ, मन भर भक्ति दो।।3।।

ऊँ ह्रीं षट्आवश्यकभावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों सम भोग लुभायें, मैं तो खिंचा गया।
पुण्यों से कर दिया हीन, मैं तो लुटा गया।।
आवश्यक पालन हेतु, मुझको शक्ति दो।
मैं पुष्प से पूजूँ नाथ, मन भर भक्ति दो।।4।।

ऊँ ह्रीं षट्आवश्यक भावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

थोड़ी है पेट की भूख, थोड़े में भर जाता।
पर मन की भूख अपार, गिरि छोटा होता।।
आवश्यक पालन कर, भूख को दूर करूँ।
नैवेद्य चढ़ा चरणन, चरणों नमन करूँ।।5।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यक भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

है ज्ञान तीसरा नेत्र, जिससे आत्म दिखे।
इसे खोल दिखाओ आत्म, भ्रम तम दूर भगे।।
आवश्यक पालन कर, ज्ञान का दीप जगे।
दीपक से पूजँ नाथ, अपने आप लगे।।6।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यक भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरा प्रमाद मुझे नाथ, धर्म से दूर करें।
ये कर्म निभाये साथ, मन ना धरम करें।।
अपनी गल्ती को सुधार, आवश्यक पालूँ।
ले धूप से पूजूँ नाथ, गुण तेरे गालूँ।।7।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यक भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ति फल पा भगवान, प्रभु जी आप बने।
हम भी बन सके भगवान, कर्म जो आप हने।।
आवश्यक करना उपाय, कर्म भी झर जायें।
आवश्यक शक्तिवान, फल भी मिल जाये।।8।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यक भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

संकल्प कठोर लिया, पालन करना है।
आया है शुद्ध विचार, भगवन बनना है।।
सच्चे सुख का है भाव, आवश्यक पालो।
लो अर्घ्य से पूजूँ नाथ, महिमा को गालो।।9।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यक भावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

लाख काम को छोड़कर, करना धर्म जरूर।
धर्म ही साथ निभायेगा, सुख देगा भरपूर।।

।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

पद्धरि छंद (तर्ज–धर्म है आतम........)

रहती भावों में समता है, समता से बढ़ती क्षमता है।
सामायिक समता से करते, समता से कर्मों को हरते।।1।।

ऊँ ह्रीं सामायिकसहित षट्आवश्यक भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

चौबिस जिनकी स्तुति गाते, भक्ति से महिमा बतलाते।
भक्ति ने कर्म को नाशा है, भागे सब दूर निराशा है।।2।।

ऊँ ह्रीं स्तवन सहित षट् आवश्यक भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

कर जोड़ शीश को नमते है, वन्दन प्रभु का नित करते है।
आदर्श हमारे है जिनवर, उनकी छवि लगती है मनहर।।3।।

ऊँ ह्रीं वन्दना सहित षट् आवश्यक भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

जाने अनजाने में दोष लगे, कर प्रतिक्रमण वे पाप भगे।
वे क्षमा मांगते करते है, नहि बैर किसी से धरते है।।4।।

ऊँ ह्रीं प्रतिक्रमण सहित षट्आवश्यक भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

वे पाप क्रिया का करें त्याग, वे आत्म ओर से रहे जाग।
आतम शत्रु ना आ सकता, आवश्यक का ले बैठे डंडा।।5।।

ऊँ ह्रीं प्रत्याख्यान सहित षट्आवश्यक भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

जब आत्म ध्यान में आप बहे, काया की सुध बुध नाहिं रहे।
कायोत्सर्ग करते रहते है, इससे भी कर्म तो झरते है।।6।।

ऊँ ह्रीं कायोत्सर्ग सहित षट्आवश्यक भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

दोहा

समता धर वन्दन करें, स्तुति प्रत्याख्यान
प्रतिक्रमण मन से करें, आवश्यक छह जान।।

ऊँ ह्रीं षट् आवश्यक भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

त्रिभंगी छंद

अवगुण हरो मेरे, शरण में तेरे, तीन लोक के स्वामी हो।
जंजीर करम की, तोड़े धरम ही, आपहि अंतर्यामी हो।।
पुरूषार्थ हमारा, द्वार तुम्हारा, मानव जीवन सफल करे।
जयमाला गाऊँ, गा हर्षाऊँ, चरणों में नित नमन करे।।

चाल छंद (तर्ज–तुम सम्मेद शिखर.....)

आवश्यक मुनिवर पालें, टूटे कर्मों के जाले।
तीर्थंकर पद में कारण, करें जग दुख का निवारण।।1।।
शुभ संस्कार हो गहरे, पापों के लिये है पहरे।
जिनवर भक्ति करते है, जिन गीत से मन हरते है।।2।।
पहले वे स्वयं ही करते, फिर वे उपदेश को देते।
जग से ये मोह हटावें, निज आत्म को दृढ़ करवावें।।3।।
पापों का क्षय करते है, निज धर्म में वे बढ़ते हैं।
समता कषाय को नाशै, औ जीवन ज्योत प्रकाशे।।4।।
तीर्थंकर पूर्व में करते, तब ही तीर्थंकर बनते।
भव से ये पार लगाते, औरो को साथ ले जाते।।5।।
प्रभु भक्ति में है शक्ति, जग से छूटे आसक्ति।
ले मौन मुनि निज ध्याते, हम गुरू को शीश झुकाते।।6।।

दोहा

प्रेम देह से कम करो, ये ना साथ निभाये।
आतम हित कर लो सभी, जन्म सफल हो जायें।।

ऊँ ह्रीं षट् आवश्यक भावनायै अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

छोटी गागर भक्ति की, नहीं शब्द नहि गीत।
भक्ति काम स्वीकार लो, जग में कोई न गीत।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्र ऊँ ह्रीं षट् आवश्यक भावनायै नमः

मार्ग प्रभावना भावना पूजा

शंभू छंद

जिन धर्म पालन करन से, हर आत्मा भगवन बने।
उस धर्म को सब ही धरे, औ सौख्य पाये सब घने।।
जब ऐसे भाव हृदय में आयें, जग में प्रभावना होती है।
हर हृदय में हो ज्ञान दीपक, मिले सुख के मोती है।।

ऊँ ह्रीं मार्ग प्रभावना भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं मार्ग प्रभावना भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं मार्ग प्रभावना भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

भुजंग प्रयात (तर्ज– नरेन्द्र फणीन्द्र..)

आतम की शक्ति, जो पहचान लेता।
पुद्गल की प्रीति से, मुँह मोड़ लेता।।
जिन धर्म की जग, प्रभावना होवे।
चरण जल से पूजूँ, औ मृत्यु को खोवे।।1।।

ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शब्दों की ठंडक, औ शब्दों से जलते।
मन की अशुद्धि से, भाव निकलते।।
जिनधर्म आतम को, शीतल है करता।
चन्दन से पूजूँ, बुरे कर्म हरता।।2।।

ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्याणकारी है, जिनवर की आज्ञा।
सम्यक्त्व देवे, जो पाले है आज्ञा।।
अक्षयपुरी का, वो नाथ है बनता।
अक्षत से पूजूँ, तो होगी विमलता।।3।।

ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

भोग के पश्चात्, रोग सतावे।
रोग में धर्म, ना आतम करावें।।

भोग को छोड़े, आतम स्वस्थ होगी।
पुष्पों से पूजूँ, नहीं होगी रोगी।।4।।
ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावनाभावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
भोजन तो छोड़ो, व्यसन में फँसे है।
नरक राह चल के भी, अभी वे हँसे है।।
व्यसन तज औ भोजन में संयम है लाऊँ।
नैवेद्य से पूज, आतम को ध्याऊँ।।5।।
ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
आँखे मिली पर, ना सच्चाई दिखती।
नहीं ज्ञान सच्चा, ना अच्छाई दिखती।।
ज्ञान उजाला ही, आतम दिखावे।
चढ़ा दीप चरणों में, भावों से ध्यावें।।6।।
ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
संघर्ष कर्मों से, करता रहा हूँ।
नहीं कर्म भागे, मैं लड़ता रहा हूँ।।
जब शांत बैठे, करम तब ही भागें।
धूप से पूजूँ, निजातम में जागे।।7।।
ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
जीवन की डोर, तुम्हें सौंप दी है।
संभालो प्रभु जी, शिकायत नहीं है।।
सफलता मिले या विफलता को पाऊँ।
नहीं कोई चिंता, मैं फल को चढ़ाऊँ।।8।।
ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
जीवन का अंतिम, मुकाम आ गया।
मृत्यु का अब तो, पैगाम आ गया।।
आतम को शुद्ध, बनाने को आऊँ।
चढ़ा अर्घ्य चरणों में, शीश झुकाऊँ।।9।।
ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावनाभावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

धर्म दीप घर–घर जले, हो अज्ञान का नाश।
सब जीवों को सुख बढ़े, ज्ञान का होय विकाश।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

प्रत्येक अर्घ्य

शेर चाल (दे दी हमें आजादी...)

जिनदेव का मन्दिर तो निज, धन से बसाया।
तीर्थ सिद्ध क्षेत्र को भी, संघ चलाया।।
देकर के दान धर्म की, प्रभावना करी।
जिनधर्म में लगा के धन, जड़ हरी करी।।1।।
ॐ ह्रीं द्रव्यते मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
निज आत्म तन की शक्ति से जो, धर्म धारा है।
जन देखते उसे तो, उनने पाप छोड़ा है।।
शक्तिशाली धर्म करें, शक्ति बढ़ाता।
जिनधर्म की प्रभावना में, आगे वो आता।।2।।
ॐ ह्रीं शक्तितै मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
जिनदेव की आज्ञा प्रमाण, नियम पाला है।
जैसा कहा वैसा किया, ना रंच टाला है।।
जिन धर्म ध्वजा लेके, जगत में फहराया है।
जो आज तक है चल रही, उनकी ही माया है।।3।।
ॐ ह्रीं आज्ञातै मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
धर्म ज्ञान इतना किया, चकित है सभी।
ज्ञान से प्रभावना तो, उसने है करी।।
धर्म ज्ञान करते रहो, कल्याण होयगा।
व्यर्थ कार्य से बचोगे, पुण्य होयगा।।4।।
ॐ ह्रीं तपतै मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
तन में ममता तजी, करी घोर तपस्या।
जो देखता है चकित रहे, दूर समस्या।।
उनका तप जिनदेव की ही, याद दिलाता।
जिनधर्म की ध्वजा को उड़ा, तप में लगाता।।5।।
ॐ ह्रीं मनतै मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

मन सदा ये धर्म की, प्रभावना चाहें।
औ कार्य भी ऐसा करें, बढ़े धर्म की राहें।।
जिससे धरम प्रभावना, हुई जगत में।
हर प्राणी को है धर्म भावे, बन भगत वें।।6।।
ऊँ ह्रीं ज्ञानतै मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
इतना बड़ा दान किया, अचरज सभी करें।
इससे धरम प्रभावना, और भी बढ़े।।
जिनधर्म की प्रभावना की, रखों भावना।
होगी सभी मनवांछा पूर्ण, होगी कामना।।7।।
ऊँ ह्रीं दानतै मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
धर्मात्मा को न्याय मिले, हो प्रभावना।
इससे धरम के भाव बढ़े, यही भावना।।
सारे जगत में सुख बढ़े, जब भावना होती।
पदवी तीर्थंकर की मिले, जले ज्ञान की ज्योति।।8।।
ऊँ ह्रीं न्यायतै मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
ऐसी करो भक्ति प्रभु की, देवता आवें।
अतिशय दिखावे सबको, सभी भावना भावें।।
उनकी भक्ति से प्रभाव, ऐसा पड़ा है।
हर व्यक्ति भक्त बन के, प्रभु चरण खड़ा है।।9।।
ऊँ ह्रीं भक्तितै मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
धर्म भाव आया तो, समता भी आई है।
उसकी ये समता, जन के मन समाई है।।
समता से हो प्रभावना, समता को धारिये।
जिनधर्म की प्रभावना से, कर्म हारिये।।10।।
ऊँ ह्रीं समता तै मार्गप्रभावना भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

दोहा

मार्ग प्रभावना भावना, जिसके हृदय समाय।
तीर्थंकर पदवी मिले, मुक्ति सुख पा जाय।।
ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै महार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य मंत्र :–

जयमाला

दोहा

प्रथम धर्म खुद धारिये, फिर देवे संदेश।
धर्म प्रभावना होयगी, मिले चेतन का देश।।

पद्धरि

जिन धर्म प्रभावना जो करता, पापों के पातक को हरता।
तीर्थंकर का पद पाता है, मिलती जीवन में साता।।1।।

ज्ञानी बन धर्म प्रभाव करें, सब भावों में भी ज्ञान भरें।
जो द्रव्य दान दे उपकारी, वह कल्पवृक्ष जय सुखकारी।।2।।

तप धार स्वपर कल्याण करें, अनुमोद सभी जन पुण्य भरे।
उत्साह से मेला लगाते है, कल्याणक पंच कराते है।।

रथ यात्रा शहर में जाती है, जन–जन के मन को भाती है।
समता धर धर्म को धारे है, तन मन धन सब कुछ वारे।।4।।

इससे सम्यदर्शन होता, पापों का क्षय जो कर देता है।
इक दिन मुक्ति को पाता है, तोड़े जग से सब नाता है।।5।।

दोहा

बुरे कर्म को छोड़ना, है प्रभावना सार।
तुम्हें देख सुधरें सभी, होवे भव से पार।।

ऊँ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

ज्ञान ध्यान तप भी करो, होगा धर्म प्रचार।
आतम की शुद्धि हुई, मिल गया सौख्य अपार।।

।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं मार्ग प्रभावना भावनायै नमः

प्रवचन वात्सल्य पूजा

दोहा

वात्सल्य जिनवाणी से, धर्मात्मा की रीत।
पंथ मिले मुक्ति का जो, करें इसी से प्रीत।।
भक्ति अर्चना पूजा से, वन्दन है शतवार।
आव्हानन इनका करूँ, करता है भव पार।।

ऊँ ह्रीं प्रवचन वात्सल्य भावना! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहाननम्।
ऊँ ह्रीं प्रवचन वात्सल्य भावना! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं प्रवचन वात्सल्य भावना! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् सन्निधिकरणाम्।

दोहा

आत्म मैल को धोवने, धर्म का जल ले आये।
प्रवचन से शुद्धि करों, चरणों शीश झुकाये।।1।।

ऊँ ह्रीं प्रवचन वात्सल्य भावनायै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन तन शीतल करें, आतम धर्म से होय।
धर्म ज्ञान प्रवचन से हो, ज्ञान आत्म सुख होय।।2।।

ऊँ ह्रीं प्रवचन वात्सल्य भावनायै संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम रूप अखंडता, सुख अखंड का धाम।
जिनवाणी ने बताया है, आतम है निष्काम।।3।।

ऊँ ह्रीं प्रवचन वात्सल्य भावनायै अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मोहित भोगों ने किया, आतम भूला आत्म।
पुष्प से प्रवचन पूजता, होवें मम शुद्धात्म।।4।।

ऊँ ह्रीं प्रवचनवात्सल्यभावनायै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान का अमृत जब पिया, पेट भूख मिट जाये।
तृप्ति आतम में हुई, शत्–शत् शीश झुकाये।।5।।

ऊँ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य भावनायै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

नजर है किन्तु नजरिया ना, सत्य समझ ना आयें।
सत्य ज्ञान दीपक जले, दीप से पूज रचायें।।6।।

ऊँ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य भावनायै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पराधीन जीवन मेरा, कर्मों के आधीन।
कर्म धूम उड़ जाये तो, हो जाऊँ स्वाधीन।।7।।

ऊँ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य भावनायै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यर्थ कार्य में खो रहा, हीरा जनम अमोल।
फल न मिल निष्फल हुआ, नाम प्रभु का बोल।।8।।

ऊँ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य भावनायै मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंध अक्षत लिया, पुष्प नैवेद्य का साथ।
दीप धूप फल अर्घ्य चढ़ा, झुका चरण में माथ।।9।।

ऊँ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य भावनायै अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

प्रवचन वत्सल भाव धर, गुरूवर चरण में जायें।
श्रद्धा से प्रवचन सुनो, पुष्पांजलि कराये।।
।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत्।।

चौपाई

श्वेत पत्र मोटा चिकना हो, जिन सूत्र उस पर लिखना हो।
प्रवचन वत्सल भाव बताया, हमनें भाव से अर्घ्य चढ़ाना।।1।।

ऊँ ह्रीं शुभ पत्रनिविषै लिखावन प्रवचनवात्सल्य भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

चांदी से अंक औ शब्द स्वर्ण से, अक्षर सुन्दर सभी वर्ण से।
इस विधि से लिखना सिद्धांत, हर जायेगे सारे भ्रांत।।2।।

ऊँ ह्रीं मनोज्ञ अक्षर लिखावन प्रवचनवात्सल्य भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

शास्त्र बांधने शुभ अछार हो, सेवा करके शुभ विचार हो।
प्रवचन भक्ति नजर है आती, सब प्राणी के मन को भाती।।3।।

ऊँ ह्रीं मनोज्ञउछाड़ बंधन प्रवचनवात्सल्यभावनायै अर्घ्य नि. स्वाहा।

जिल्द हो अच्छी और मजबूत, सोना चांदी लगाओ खूब।
भक्ति में जितना कर लीजे, उतना और कही न कीजे।।4।।
ऊँ ह्रीं सुभगपुट्ठा करण प्रवचनवात्सल्यभावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
स्वर्ण चांदी की सुन्दर चौकी, महिमा शास्त्र की सबने जानी।
चौकी पर शुभ चित्र बनाओ, जिनवाणी की महिमा गाओ।।5।।
ऊँ ह्रीं बचानेकीसुभगकरणचौकी प्रवचनवात्सल्यभावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
मन वच काय को स्थिर करके, जिनवाणी को शीश झुका के।
हाथ जोड़ तब शास्त्र को पढ़ना, मोक्ष मार्ग में आगे बढ़ना।।6।।
ऊँ ह्रीं विनयतैशास्त्रपठनप्रवचनवात्सल्यभावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
श्रद्धा से सावधान बैठना, स्थिर चित्त जिनवाणी सुनना।
विनय साथ जो ज्ञान लिया है, आतम अंदर वही गया है।।7।।
ऊँ ह्रीं विनयतै शास्त्रश्रवण प्रवचनवात्सल्यभावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
विनय साथ जिनवाणी रखना, तभी स्वाद निज ज्ञान का चखना।
विनय से ही पन्ना पलटाओ, क्षमा मांग कर शीश झुकाओ।।8।।
ऊँ ह्रीं विनयतैशास्त्रधारण प्रवचनवात्सल्यभावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
बड़े जतन से शास्त्र उठाना, विनय की सारी रीत निभाना।
प्रवचन वात्सल्य इसे बताया, शुभ भावों को अर्घ्य चढ़ाया।।9।।
ऊँ ह्रीं विनयतै पुस्तकउठावन प्रवचनवात्सल्य भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
शास्त्र की सुन्दर हो अलमारी, दीमक सीलन नाही लगारी।
पूर्ण सुरक्षित भाव से रक्खो, प्रवचन वत्सल भाव को चक्खो।।10।।
ऊँ ह्रीं विनयतै पुस्तकधारण स्थान करावन प्रवचनवात्सल्य भावनायै अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।।

महार्घ्य

दोहा

अनेक तरह से विनय कर, रक्षा भाव बनाये।
स्वाध्याय प्रतिदिन करो, शत्–शत् शीश झुकाये।।

ऊँ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य भावनायै महाअर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।।

जयमाला

दोहा

दिव्य ध्वनि का सार है, आगम का आधार।
दिव्य भाव हो जायेगें, प्रवचन हृदय में धार।।

पद्धरि छंद

तीर्थंकर की ये वाणी है, जिनवाणी जी कल्याणी है।
प्रवचन वत्सल जो धरता है, वह तीर्थंकर ही बनता है।।1।।

जो विनय भाव से पढ़ता है, श्रुत जन्म–जन्म तक बढ़ता है।
आतम का ज्ञान भी हो जाता, जड़ चेतन भान भी हो जाता।।2।।

हो प्रेम विनय भक्ति प्रीति, आतम में उतरे यह रीति।
जो प्रेम समर्पण करवाये, शास्त्रों की सेवा करवाये।।3।।

ज्ञानावरणी क्षय होता है, पापों का बंधन खोता है।
सद्ज्ञान उसे हो जाता है, जो वत्सल भाव बनाता है।।4।।

दोहा

वचन श्रेष्ठ प्रवचन कहे, श्रेष्ठ ज्येष्ठ बन जायें।
जो भी शरण में आयेगा, सच्चा सुख पा जाये।।

ऊँ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

श्रेष्ठ भावना भक्ति है, भक्ति से लिखा पाठ।
"स्वस्ति" नमन है कर रही, आत्म ज्ञान का ठाठ।।

।।परिपुष्पांजलि क्षिपेत्।।

जाप्य मंत्रः– ऊँ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै नमः

समुच्चय जयमाला

दोहा

पद् तीर्थंकर महान है, भाग्यवान ही पाय।
सोलह भावना भाये के, इक दिन मुक्ति में जायें।।

शेर चाल(तर्ज– दे दी हमें आजादी......)

चौबीस ही तीर्थंकरों को, नमस्कार है।
भूत भावी वर्त को भी, नमस्कार है।।
सोलह ही भावना को भा, तीर्थंकर बन गये।
तिरते स्वयं औरो को भी, तिरा ले गये।।1।।

दर्शन विशुद्धि भावना, आतम की शुद्धि हो।
धर के विनय की भावना, शुभ योग वृद्धि हो।।
अतिचार रहित शीलव्रत अशुभ से हटाये।
अभ्यास किया ज्ञान, भेद ज्ञान को पाये।।2।।

संसार भोग भावना, संवेग हटाये।
फिर शक्ति से तप त्याग को, आचार में लाये।।
साधु समाधि भावना निर्वाण दिलाये।
धर्मात्मा की वैयावृत्ति, रोग हटाये।।3।।

अरिहंत भक्ति कर्म नाश, शीघ्र ही करती।
आचार्य भक्ति आचरण, के भाव को भरती।।
बहुश्रुत की भावना ने, खूब ज्ञान कराया।
प्रवचन में गुरूदेव ने भी, वही बताया।।4।।

जिन धर्म की प्रभावना, हर जीव सुखी हो।
हर आत्म में जिन धर्म हो, वो नहीं दुखी हो।।
प्रवचन में प्रेम वात्सल्य शीघ्र बढ़ाये।
जो भावना ये भाये, मुक्ति सीढ़ी चढ़ाये।।5।।

दोहा

सोलह कारण भावना, जग में बड़ी महान।
विनय भाव से भाइये, 'स्वस्ति' करें प्रणाम।।

ऊँ ह्रीं दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शीलव्रतेष्वनतिचार, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, संवेग, त्याग, तप, साधुसमाधि, वैयावृत्य, अरहंतभक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुतभक्ति, प्रवचनभक्ति आवश्यकापरिहाणि, मार्गप्रभावना, प्रवचनवात्सल्य, नाम षोडशकारणेभ्यः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलहकारण व्रत करें, होवे भव से पार।
तीर्थंकर पदवी मिले, श्रद्धा हृदय में धार।।
परिपुष्पांजलि क्षिपेत्।

प्रशस्ति

सोलह कारण भाव की भक्ति, लिख विधान की है अभिव्यक्ति।
महिमा इसकी अगम अपार, व्रत करता पाता फलसार।।1।।

हम भी व्रत के भाव बनाये, सोलह भाव को शीश झुकाये।
बीस–बीस सन् की है बात, कोरोना का हुआ आघात।।2।।

महामारी सारे में फैली, बचने को सब घर में बंदी।
भक्त जहाजपुर रूके आने से, दूर से ही आशीष पाने से।।3।।

मार्च से अप्रैल बंद रहा है, सबने मन का कष्ट सहा है।
चैत सुदी की तीज को प्रारंभ, चैत सुदी अष्टमी को समापन।।4।।

छह दिन में पूरा हुआ है, प्रभु गुरू ने आशीष दिया है।
"स्वस्ति ने यह भक्ति कीनी, भावों में भक्ति भर लीनी।।5।।

।।इति षोडश कारण पूजा समाप्तम्।।

16 कारण है?

वर्तमान समयमें संसार के वैज्ञानिकों कपड़े के मैल धोने के, फर्श का, शीश का, शरीर का एवं अन्य समस्त मशीनों के मैल साफ करने के अनेक सर्फ आदि वस्तुओं का निर्माण किया है। पर आत्मा का मैल साफ कर सके, मन के मैल को धो सके ऐसा कोई साबुन नहीं बनाया। यदि आत्मा को मैल साफ हो जाये तो, संसार की वस्तुओं की आवश्यकता खत्म हो जाती है। पराधीन जीवन समाप्त होकर स्वाधीन जीवन हो जाता है। वैज्ञानिकों पुदग्ल की शक्ति पहचान कर, अनेक यंत्रों का निर्माण किया है।

पर वैज्ञानिक अभी आत्मा तक नहीं पहुँच पाया है।बाहर की मशीन एक सीमा तक सुख पहुँचाती है। उसके पश्चात् वही वस्तु दुखदायक हो जाती है। पर आत्मा के लिये किया सुख प्रयास प्रारंभ में कष्टदायक मालूम होता है। पर अंततः परम सुख और परम शांति का कारण होता है।

अतः भौतिक जीवन से श्रेष्ठ अध्यात्मिक जीवन है। और उस अध्यात्मिक जीवन को उत्तम बनाकर मंजिल तक पहुँचाने वाली सोलह कारण भावना है। जो आत्मा के मैल को धोकर आत्मा को उज्जवल और स्वच्छ बनाती है। इन सोलह कारण भावनाओं वे सभी भाव समाहित है जिसको जीवन में उतारने पर एक आत्मा परमात्मा अवश्य बन जाती है। अर्थात् परमात्मा बनने में भी जो तीर्थंकर की महान पदवी उसे प्राप्त कर स्वयं भगवान बना अन्य जीवों को राह दिखाकर भगवान बनाता है। अतः ये भावनायें अनुकरणीय है अनुपालनीय है अनुभावनीय है। एक दिन में सब कुछ नहीं हो जाता पर धीरे-धीरे अभ्यास से मंजिल तक पहुँचा जा सकता है।

तत्वार्थ सूत्र के छटवें अध्याय में सोलहकारण भावनाओं का वर्णन पढ़ने और समझने मिलता है एवं अन्य कई ग्रन्थों में भी मिलता है। पर विधान के माध्यम से भावनाओं की पूजा भक्ति भी हो जाती है एवं समझना भी आसान हो जाता है। सोलहकारण भावनाओं के व्रत उपवास आदि करना उत्तम है, इससे आचरण रूप आराधना साधना एवं ज्ञान और भक्ति हो जाती है।

अतः अपने जीवन में सोलहकारण भावना के व्रत अवश्य करें तथा बिना कारण सोलहकारण विधान अवश्य करें। अर्थात् ना भी करें तो भी अवश्य करें। ताकि आत्मा परमात्मा की राह पर चल सकें।

सोलह कारण भावनाओं में जैन धरम का संपूर्ण सार है। जिसमें श्रद्धा भक्ति और चारित्र के लिये संपूर्ण सामग्री विस्तार में है। दर्शन विशुद्धि, विनय सम्पन्नता, शीलअतिचार सहित अभीक्ष्णज्ञानोपग, संवेग, अरहंत भक्ति, बहुश्रुत भक्ति, आचार्य भक्ति, प्रवचन भक्ति वात्सल्य षट् आवश्यक मार्ग प्रभावना। जीवन में करने योग्य इस प्रकार संपूर्ण जैनागम का सार इसमें समाहित है।